अरफ़ात किरण

नाक़ाबिले तब्दील हक़ीक़त

"यह उम्मत एक सदाबहार दरख़्त है, यह उम्मत कोई फ़न्ने तामीर का नमूना नहीं कि जो बन गया वह बन गया, बल्कि यह उम्मत एक दरख़्त है और दरख़्त में शादाबी भी आती है और ख़ुश्की भी आती है, लिहाज़ा उम्मत के लिए तब्दीलियों से गुज़रना नागुज़ीर है, लेकिन एक चीज़ है जो नाक़ाबिले तब्दील है, वह इस उम्मत का ख़ुदा के साथ ताल्लुक़, शरीअत से ताल्लुक़ है, फ़ातेह हो जब भी रोज़ा रखेगी, मफ़तूह हो जब भी रोज़ा रखेगी, क़लील हो जब भी रोज़ा रखेगी, कसीर हो जब भी रोज़ा रखेगी और अगर उसको फ़तह मिली तो उसी नमाज़ रोज़ा के रास्ते से मिलेगी और अगर ज़िल्लत उसके नसीब में आएगी तो इसमें कोताही करने के सबब आएगी, गोया मिल्लत के अन्दरून में कोई तब्दीली नहीं, उसका ताल्लुक़ ख़ुदा के साथ हमेशा क़ायम रहेगा।

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी (रह0)
रमज़ानुल मुबारक और उसके तक़ाज़ेः 151

April - May
2022

मर्कजुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

माह-ए-रमज़ान और हम

"रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के जूद व करम का दरिया तो हमेशा ही बहता रहता था, लेकिन माहे रमज़ान में रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की सख़ावत व फ़य्याज़ी और ख़िदमते ख़ल्क़ की तो कोई हद ही नहीं रहती थी और सदक़ात व ख़ैरात का नम्बर हर ज़माने से कहीं ज़्यादा बढ़ जाता था और ज़िक्रे इलाही व नमाज़, नवाफ़िल और तिलावते कुरआन और एतिकाफ़ बस दिन–रात की यही मशग़ूलियत थी और यही रात–दिन का मामूल इस सारे माहे मुबारक को रसूलुल्लाह (स0अ0व0) तरह–तरह की इबादतों के लिये मख़सूस रखते।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के रमज़ान का हाल आपने सुन लिया? अब औलिया–ए–उम्मत के रमज़ान का मन्ज़र भी देख लीजिए!

हज़रत मौलाना ख़लील अहमद साहब (रह0) बावजूद बुढ़ापे व ज़ईफ़ी के मग़्रिब के बाद नवाफ़िल में पारा कोई पढ़ता या सुनाता और उसके बाद आधा घंटा खाना वग़ैरह ज़रूरतों के बाद, हिन्दुस्तान के क़याम में दो–सवा दो घंटे तरावीह में ख़र्च होते थे और मदीना पाक के क़याम में तक़रीबन तीन घंटे में इशा और तरावीह से फ़राग़त होती। हज़रत मौलाना शेखुल हिन्द तरावीह के बाद से सुबह की नमाज़ तक नवाफ़िल में मशग़ूल रहते थे और एक के बाद एक अलग–अलग हाफ़िज़ों से कुरआन पाक सुनते थे और हज़रत मौलाना शाह अब्दुर्रहीम रायपूरी (रह0) के यहां रमज़ानुल मुबारक का महीना दिन व रात तिलावत ही का होता था कि उसमें डाक भी बन्द और मुलाक़ात भी ज़रा गवारा न थी।

अब इरशाद हो कि आपके रमज़ान को इस तरह के रमज़ान से कोई निस्बत और कोई मुनासबत है? आप कहते हैं कि रमज़ान आ गया, लेकिन रमज़ान क्या नाम है महज़ जन्तरी में लिखे हुए चांद के सन् के नवें महीने का? रमज़ान अगर वाक़ई आपके यहां आ गया है तो कहां हैं आपकी मुसलसल इबादतें और ताअतें, नमाज़ें और तिलावतें, शब बेदारियां और ख़ल्क़ की ख़िदमत गुज़ारियां, दुआएं और मुनाजातें, नेकियां और फ़य्याज़ियां? रोज़ा रखने वाले ही अव्वल तो अब कितने हैं और जो हैं भी ज़रा उनके दिन रात के मामूल पर एक नज़र डालिये, वही ग़फ़लतें, वही मदहोशियां, वही ग़ीबतें और वही मरदुम आज़ादियां, वही बुख़्ल और वही इसराफ़, इबादत से वही नफ़रत और फ़स्क़ व फ़िजूर से वही रग़बत! बरसात नाम बारिश के ख़ूब होने का है, महज़ बरसाती महीनों के आ जाने का नहीं, सावन–भादों अगर सूखे ही गुज़र जाएं तो ज़मीन में तरी और पेड़ों पर हरियाली कहां से आएगी, फिर माहे मुबारक के हुक़ूक़ में से अगर हम कोई हक़ भी नहीं अदा कर रहे हैं तो माहे मुबारक की बरकतों से महरूमी पर गिला–शिकवा किस मुंह से कर सकते हैं?"

मुफ़स्सिर-ए-कुरआन हज़रत मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी (रह0)

(सच्ची बातें: 179–181)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:4–5 अप्रैल–मई २०२२ ई० वर्ष:14

संरक्षक: हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (अध्यक्ष – दारे अरफ़ात)

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुबहान नाखुदा नदवी

महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

रोज़े की अहमियत

अल्लाह के रसूल
(सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम)
ने फ़रमाया:

"अल्लाह तआला का फ़रमान है: बिलाशुब्हा रोज़ा मेरे लिए है और मैं ही उसका बदला दूंगा, यक़ीनन रोज़ेदार के लिए दो खुशियां हैं, एक जब वह इफ़्तार करे और दूसरे जब वह अल्लाह से मुलाक़ात करेगा और क़सम है उस ज़ात कीक जिसके क़ब्ज़े में मुहम्मद (स०अ०व०) की जान है! रोज़ेदार के मुंह की बू अल्लाह को मुश्क की खुशबू से ज़्यादा पसंद है।"

सही मुस्लिम: 2764

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली, यू०पी०.229001

प्रति अंक 15रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण, मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

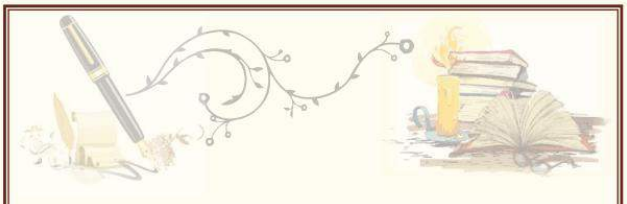

नाज़ जिसपे करें सज्दे वह जबीं ...

जनाब जिगर मुरादाबादी (रह०)

पहले तो हुस्ने अमल हुस्ने यक़ीं पैदा कर
फिर उसी ख़ाक से फ़िरदौसे बरीं पैदा कर

यही दुनिया कि जो बुतख़ाना बनी जाती है
इसी बुतख़ाने से काबे की ज़मीं पैदा कर

रुहे आदम निगरां कब से है तेरी जानिब
उठ और एक जन्नत–ए–जावेद यहीं पैदा कर

ख़स व ख़ाशाक तो हमको जलाकर रख दे
यानि आतिश कदा सोज़े यक़ीं पैदा कर

ग़म मयस्सर है तो उसको ग़मे कौनेन बना
दिल हसीं है तो मुहब्बत भी हसीं पैदा कर

आसमाँ मरकज़े तरव्वुल व तसव्वुर कब तक
आसमाँ जिससे खजल हो वह ज़मीं पैदा कर

दिल के हर क़तरे में तूफ़ाने तजल्ली भर दे
बतन हर ज़र्रे से एक मेहरे मुबीं पैदा कर

बन्दगी यूं तो है इन्सान की फ़ितरत लेकिन
नाज़ जिसपे करें सज्दे वह जबीं पैदा कर

पस्ती व ख़ाक पर कब तक तेरी बाल व परी
फिर मुक़ाम अपना सरे अर्शे बरीं पैदा कर

इश्क़ ही ज़िन्दा व पाइन्दा हक़ीक़त है जिगर
इश्क़ को आम बना ज़ौक़े यक़ीं पैदा कर

इस अंक में:

ईद का चाँद या उम्मीद की सुबह.....3
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

हम रमज़ान कैसे गुज़ारें.....5
हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी

ईमान वालों का अक़ीदा.....8
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

रोज़े का मक़सद.....10
मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह0)

सच्चाई क्या है?.....11
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

रमज़ानुल मुबारक का पैग़ाम.....13
महमूद हसन हसनी नदवी

रोज़े के मुख़्तलिफ़ मसले.....15
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

एतिकाफ़ के कुछ मसले.....19

ज़कात – कुछ ज़रूरी हुक्म व मसले.....21

समाजवाद (Socialism).....26
सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

मौलाना अली मियाँ (रह0) की फ़िक्री दूरदर्शिता.....28
मुहम्मद अरमुग़ान नदवी

तुम न बदलोगे तो हालात भी न बदलेंगे.....31
मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

सम्पादकीय

ईद का चाँद या उम्मीद की सुबह

● बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

रमज़ान के चाँद ने एक नई फ़िज़ा पैदा की, लोगों में इबादत व रियाज़त और तिलावत व दुआ का एक उमूमी रुझान पैदा हुआ, मिज़ाजों में नर्मी पैदा हुई, हुस्न व सुलूक और मुहब्बत व ईसार जैसी सिफ़ात जगह–जगह नज़र आने लगीं, अल्लाह की रहमत साया फ़गन हुई, कितने गुनाहगार बख़्शे गए और कितने वह लोग जो जहन्नम के रास्ते पर पड़ चुके थे, तौबा के नतीजे में उनके लिए भी जन्नत के फ़ैसले हुए।

अब मौसमे बहार गुज़रने को है, ईद का चाँद निकलने को है, फिर वही रुत होगी, वही दिन–रात होंगे, लेकिन अल्लाह के वह बन्दे कामयाब होंगे जिन्होंने अपने दाम को गुले मक़सूद से भर लिया है, रमज़ान उनसे ख़ुश गया, रमज़ान के बाद उनके लिए नए अज़ाएम होंगे, नया हौसला होगा, काम का जज़्बा होगा, एहसासे अमल की चिंगारी उनके दिल में फ़िरोज़ा होगी, अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की मुहब्बत से सरशार होकर वह रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के दीन के लिए परवानावार निकल पड़ेंगे, उनके अन्दर क़ुर्बानी के जज़्बात होंगे, उम्मत का दर्द होगा, जिसको वह उम्मत के एक–एक फ़र्द तक पहुंचाने की कोशिश करेंगे।

दुनिया की मौजूदा सूरतेहाल ने उम्मीद की सुबह जगाई है, लोगों को सोते से बेदार किया है, अब तक जो ख़्वाबे ग़फ़लत में थे, वह अल्हम्दुलिल्लाह मैदाने अमल में आने के लिए बेचैन हैं।

हमारा मुल्क जो हज़रत ख़्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती (रह0), हज़रत ख़्वाजा निज़ामुद्दीन औलिया (रह0) का मुल्क है, जहां इमाम सरहन्दी (रह0) और शाह वलीउल्लाह देहलवी (रह0) ने तौहीद व सुन्नत का अलम बुलन्द किया और जहां हज़रत सैय्यद अहमद शहीद (रह0) और उनके साथियों ने ईमान की ज्योति जगाई, आज फिर वह उसी ईमानी जज़्बे और अमले पैहम का प्यासा है, उसी मुहब्बत के साथ जिसको फ़ातहे आलम कहा गया।

जो कुछ भी वाक़्यात गुज़रे और गुज़र रहे हैं, वह मायूसी के लिए नहीं हैं, मायूसी तो ईमान वालों के लिए कुफ़्र है, यह वाक़्यात तो ईमानी जज़्बे को जिला बख़्शने और अमले पैहम को लेकर मैदान में आने के लिए हैं।

सख़्त से सख़्त हालात का इस उम्मत को सामना करना पड़ा है, तारीख़ गवाह है कि यह उम्मत कभी मायूस नहीं हुई, वह नये ईमानी हौसले के साथ सामने आयी और उसने सहाबा की तारीख़ दोहरा दी, वह चाहे तातारियों का हमला हो या हिन्दुस्तान में दीने अकबरी का फ़ित्ना हो, जब–जब यह दीन ख़तरे में पड़ा, अल्लाह तआला ने ऐसे लोग तैयार कर दिये जिन्होंने तजदीद का काम किया और वह उन ख़तरात के सामने सद्दे सिकन्दरी बन गए।

ज़रूरत इस अज़्म की है कि ईद का चाँद हक़ीक़त में ईद का चाँद बन जाए, वह ख़ुशियों का पैग़ाम लेकर आए और उम्मत के लिए उम्मीद की सुबह की किरन साबित हो, लेकिन यह जब ही मुमकिन है, जब उम्मत का एक–एक फ़र्द अपनी ज़िम्मेदारी को महसूस करे, दीन का फ़हम रखने वाले और उलमा तय कर लें कि हमें हर मायूसी को उम्मीद से बदलना है, इसके लिए कम से कम चार काम करने के हैं, अगर हमने अपनी–अपनी मशग़ूलियात से वक़्त निकालकर उन पर मेहनत कर ली और हर तरह के इन्तिशार से बचते

हुए अपनेआप को थोड़ी कुर्बानी के साथ उन कामों के लिए यकसू कर लिया तो सुबहे उम्मीद दूर नहीं और क्या बईद है कि रमज़ान के चाँद के बाद जिन रियाज़तों और मेहनतों से मुसलमानों ने अपना दामन भरा है, ईद के चाँद के बाद वह सौ़गात दुनिया में तक़सीम हो।

पहली बात यही है कि हम अपना ईमान मज़बूत करें, अल्लाह पर यक़ीन दिल में बिठाएं और उसी पर भरोसा रखें कि सबकुछ उसी की कुदरत में है और सच्ची बात यह है कि वह ईमान वालों को कभी रुस्वा नहीं करता, शर्त यह है कि ईमान दिल की गहराइयों में उतर जाए, अल्लाह से ताल्लुक़ मज़बूत हो और अल्लाह की रस्सी को पूरी ताक़त के साथ थाम लिया जाए, अक़ीदा–ए–तौहीद रासिख़ हो और हर तरह मदाहनत से बचते हुए दीने शरीअत के एक–एक हुक्म को मज़बूती से थामा जाए।

दूसरी बात यह है कि तौबा व इस्तिग़फ़ार हो, अपनी ग़लतियों और कोताहियों पर नदामत हो, हदीस में आता है किः "गुनाह से तौबा करने वाला ऐसा है जैसे कि उसने गुनाह किया ही नहीं", तौबा अल्लाह की रहमत को मुतवज्जह करने का ज़रिया है, इससे बन्दा अपने रब से क़रीब होता है।

तीसरी बात यह है कि अपनी आने वाली नस्ल के ईमान की फ़िक्र हो, उसके लिए सब तदबीर अख़्तियार की जाएं, मकातिबे दीनिया और इस्लामिक स्कूल्ज़ का जाल बिछा दिया जाए, शहर–शहर ही नहीं मुहल्ले–मुहल्ले इसकी फ़िक्र की जाए, लड़कियों के लिए अलग से तालीम का मुकम्मल इन्तिज़ाम किया जाए और उसके लिए मस्जिदों को मरकज़ बनाया जाए, एक–एक मस्जिद के ज़ेरे असर जितने मुहल्ले हों उन सबका मस्जिद को सेन्टर बनाकर सर्वे किया जाए और मस्जिद से मुताल्लिक़ हर–हर मुहल्ले के एक–एक घर की फ़िक्र की जाए और उनके दीन व दुनिया की ज़रूरतें पूरी करने का निज़ाम बनाया जाए, इसके साथ मदारिसे इस्लामिया जो इस्लाम के क़िले हैं उनको भी मज़बूत करने की फ़िक्र की जाए।

चौथी बात यह है कि हम अपने तर्ज़े अमल से इस्लाम के अख़लाक़ी निज़ाम को दुनिया के सामने पेश करें और जो ग़लत फ़हमियां दिमागों में बैठ गयी हैं उनको दूर करने की कोशिश करें और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की मुबारक ज़िन्दगी में जो हमारे लिए नमूना है, उसको हम अपने लिए नमूना बनाएं और दूसरी बात यह है कि बिरादराने वतन के लिए ऐसा लिट्रेचर तैयार करें और उन तक पहुंचाने की तदाबीर करें जो ग़लतफ़हमियों को दूर करे, इसके लिए मुलाक़ातें, डायलाग्स और जलसे मुफ़ीद होंगे।

मुफ़क्किरे इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली नदवी (रह0) ने इसी मक़सद से पयामे इन्सानियत की तहरीक शुरू की थी, यह वक़्त की सबसे बड़ी ज़रूरत है, इसका लिट्रेचर भी इसी चौथे काम में बहुत मुआविन होगा।

यह चार काम अगर हमने कर लिए और हर तबक़े तक पहुंचने की कोशिश कर ली, ईमानी जज़्बे के साथ, इख़लास व अख़लाक़ की बुलन्दी के साथ, हौसला और अज़्म के साथ तो वह दिन दूर नहीं की जब दुनिया का रुख़ कुछ और हो, रास्ते खुलते ही जांए, इन्सानों को इन्सानियत का मज़ा आए और दोनों जहान की कामयाबी दुनिया का मुक़द्दर बने।

अलकुरआनः "और जो भी हमारे लिए जान खपाएंगे तो हम ज़रूर उनके लिए अपने रास्ते खोल देंगे और यक़ीनन अल्लाह बेहतर काम करने वालों ही के साथ है।" (सूरह अनकबूतः 69)

यह कुछ गुज़ारिशें इससे पहले भी अर्ज़ की गयीं थीं और रमज़ान व ईद के मौजूदा हालात की मुनासबत से दोबारा पेश की जा रही हैं, क्या बईद है कि करने वालों के लिए इसमें हिकमत व नसीहत का कुछ सामान हो।

हम रमज़ान कैसे गुज़ारें

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

एक बार रसूलुल्लाह (स0अ0) ने कहा कि मेम्बर के क़रीब हो जाओ। सहाबा किराम (रज़ि0) मेम्बर के क़रीब हो गए। जब रसूलुल्लाह (स0अ0) ने मेम्बर के पहले दर्जे अर्थात ज़ीने पर क़दम रखा तो कहाः आमीन! जब दूसरे पर क़दम रखा तो कहाः आमीन! जब तीसरे पर क़दम रखा तो फिर कहाः आमीन! जब रसूलुल्लाह (स0अ0) खुत्बा (भाषण) देकर मेम्बर से नीचे उतरे तो सहाबा किराम ने पूछा कि हमने आप आपसे मेम्बर पर चढ़ते हुए ऐसी बात सुनी जो पहले कभी नहीं सुनी थी। आप (स0अ0) ने बताया किः

"उस वक़्त जिब्राईल अलैहिस्सलाम मेरे सामने आ गए थे (जब पहले दर्जे (ज़ीने) में क़दम रखा तो) उन्होंने कहाः हलाक (विनष्ट) हो जाए वह व्यक्ति जिसने रमज़ानुल मुबारक का मुबारक महीना पाया फिर भी उसे मुक्ति न मिली हो। मैंने कहाः आमीन! फिर जब मैं दूसरे दर्जे (ज़ीने) पर चढ़ा तो उन्होंने कहा किः हलाक (विनष्ट) हो जाए वह व्यक्ति जिसके सामने आपका मुबारक ज़िक्र हो और वह दरूद न भेजे, मैंने कहाः आमीन! जब मैं तीसरे दर्जे पर चढ़ा तो उन्होंने कहाः हलाक (विनष्ट) हो जाए वह व्यक्ति जिसके सामने उसके माता–पिता या उनमें से कोई एक बूढें हो जाएं और वह उनकी सेवा करके जन्नत में दाखिल न हो जाए। मैंने कहा आमीन!" (तिरमिज़ी)

रमज़ान ऐसा स्वर्णिम अवसर है कि यदि इसमें कोशिश करे तो एक रमज़ान सारे गुनाह बख़्शवाने के लिए पर्याप्त है। जो व्यक्ति रमज़ान के रोज़े रखे और यह यक़ीन करके रखे कि अल्लाह तआला के तमाम वादे सच्चे हैं और वह तमाम नेक कामों पर बेहतर बदला देगा। रसूलुल्लाह (स0अ0) का कथन हैः

"यानि जो व्यक्ति रमज़ान के रोज़े ईमान व सवाब की नियत के साथ रखे उसके पिछले गुनाह बख़्श दिये जाएंगे।

मुसलमानों का अस्ल बीमारी बुरी नियत नहीं बल्कि नियत का न होना है

ईमान व एहतिसाब (सवाब की नियत के साथ) का यह मतलब है कि अल्लाह तआला के तमाम वादों पर पूरा यक़ीन हो और हर अमल (कर्म) पर सवाब की नियत करे और निस्वार्थ रूप से व केवल अल्लाह के लिए अमल करे और अल्लाह की रज़ा (स्वीकृति) पाना मक़सद हो और हर अमल के वक़्त अल्लाह की मर्ज़ी को देखे। ईमान व सवाब की नियत ही है जो मनुष्य के कर्मों को फ़र्श से अर्श पर पहुंचा देती है। वास्तव में इसी की कमी है। मुसलमानों का असल बीमारी बुरी नियत नहीं बल्कि नियत का न होना है। यानि सिरे से वे नियत ही नहीं करते। हम वुज़ू करते हैं मगर उसमें नियत नहीं करते। हम दीन के दूसरे काम करते हैं मगर ईमान व सवाब की नियत का उद्देश्य हमारे सामने नहीं रहता है। जब बहुत से लोग किसी काम को करते हैं तो वह रस्म बन जाती है। रोज़े का एक आम माहौल होता है। ऐसे में कोई इसलिए से रोज़ा रखे कि हम रोज़ा न रखेंगे तो छिपकर खाने–पीने से क्या फ़ायदा? यह ख़्याल आया तो रोज़े की रूह निकल गयी। बीमारियों में भी अक्सर भूखा रहना पड़ता है, इसलिए रोज़े की विशेषता सिर्फ़ भूखा रहना नहीं है। रोज़े की हक़ीक़त है अल्लाह के आदेशों की पूर्ति। जो चीज़ें छोड़ने को कही गयी है उनको छोड़ देना। पहले हम यह अन्दर यह भाव उत्पन्न करें कि अल्लाह तआला वास्तव में है है। सवाब की लौ लगी हो और दिल को तसल्ली हो कि सवाब मिल रहा है इसी में आनन्द आए।

कर्म के स्वीकार होने की पहचान व लक्षण

किसी इबादत की विशेषता और उसकी स्वीकृति की दलील यह है कि उसको करने से दिल के अन्दर नर्मी व निर्मलता, शालीनता और नम्रता का भाव पैदा हो लेकिन जब उसके विपरीत घमन्ड और गुरूर और

विलक्षणता पैदा हो तो समझ लेना चाहिए कि हमारी इबादत स्वीकृत नहीं हुई है। इसमें कमी रह गई है इसलिए उन चीज़ों को दूर करने के लिए ईमान व सवाब की नियत को मद्देनज़र रखना और उसका ध्यान रहना आवश्यक है। बिना सोचे–समझे, बिना नियत के रोज़ा रख लेना, कोई और इबादत करना व्यर्थ है। एक साहब कहने लगे:

"मैं इसलिए रोज़े रखता हूं कि जो मज़ा इफ़्तार के वक़्त आता है वह दुनिया की किसी नेमत में नहीं।" हालांकि उनका अल्लाह तआला पर ईमान भी नहीं था। हमें चाहिए कि हम दिन में कई बार नियत को ताज़ा कर लिया करें। हर वक़्त इसका ध्यान रखें। रसूलुल्लाह (स0अ0) का कथन है कि:

आदमी की औलाद के हर अमल पर उसको दस से सात सौ गुना तक सवाब मिलेगा। अल्लाह ने फ़रमाया सिवाए रोज़े के क्योंकि वह मेरे लिए है और मैं ही उसका बदला दूंगा। यह बन्दा तमाम महबूब चीज़ें मेरे लिए छोड़ता है इसलिए सिफ़ मैं ही बदला दूंगा। (मुस्लिम)

आमाल (कर्म) ताक़त पैदा करते हैं

दूसरी बात यह है कि दीन के जितने कार्य हैं वह ताक़त पैदा करते हैं यानि एक इबादत दूसरी इबादत के लिए सहयोगी साबित होती है और इसके सहयोग का साधन बनती है। जिस तरह से एक ग़िज़ा (खाद्य पदार्थ) दूसरी गिज़ा के लिए सहयोगी साबित होता है उसी तरह एक फ़र्ज़ दूसरे फ़र्ज़ की अदायगी में सहयोगी साबित होता है और उसको ताक़त उपलब्ध कराता है। यह बात नहीं कि हर कार्य अलग–अलग है। हर एक की फ़र्जियत और उसका महत्व तो बहरहाल अपनी जगह है, लेकिन एक दूसरे से अलग नहीं बल्कि एक दूसरे की मदद के लिए हैं। उसी तरह से रोज़ा साल के पूरे ग्यारह महीने की इबादत के लिए ताक़त पैदा करता है। रोज़े की वजह से दूसरी इबादतो को अदा करने का शौक़ पैदा होता है और ताक़त मिलती है।

रोज़े का मक़सद मन को नियन्त्रित करना है

तीसरी बात यह है कि रोज़े का मक़सद यह है कि मन पर क़ाबू पाया जाए और रोज़े की वजह से मन पर क़ाबू पाना आसान हो जाए। दीन का शौक़ पैदा हो। इबादतों को अदा करने का शौक़ हो। अल्लाह तआला का कथन है:

यानि हर काम के करते वक़्त अल्लाह तआला की मर्जी का ख़्याल रखा जाए। तक़वा का अनुवाद कई लोगों ने लिहाज़ से किया है यानि हर काम के करते वक़्त उसका लिहाज़ व ध्यान रखा जाए। यह काम अल्लाह की मर्जी के अनुसार है या नहीं। हलाल व हराम की पहचान हो जाए। इस तरह से अभ्यास हो जाए कि आदत बन जाए। जिस तरह से आप ईद के दिन खाने–पीने में झिझक महसूस करते है क्योंकि एक महीने से दिन में खाने की आदत छूट गई थी। इस वजह से आपको खाना–पीना आदत के ख़िलाफ़ मालूम होता है। हालांकि यह अस्थायी चीज़ थी। इस तरह से गुनाहों से बचना, उससे परहेज़, चुग़ली व बुरी बातों से, गुस्सा व कपट से परहेज़ इस तरह हो कि आपकी आदत बन जाए। जो चीज़े स्थायी रूप से हराम हैं उनको करने में तो और भी ज़्यादा आपको चौकन्ना रहना चाहिए। रोज़ से ज़िन्दगी में बदलाव होना चाहिए। आप रोज़ा रखें लेकिन गाली देना, चुग़ली करना, बुरी बात कहना व गुस्सा करना व छल–कपट न छोड़े तो रोज़े से कोई फ़ायदा नहीं।

वास्तव में बात तो यह है कि रोज़ा आपकी ज़िन्दगी के अन्दर साफ़ तौर पर बदलाव कर दे। रोज़े में आपने गुनाहों से बचने का इरादा किया है तो उस पर क़ायम रहिये और उन गुनाहों को न कीजिए जिनको आपने रोज़े की वजह से छोड़ दिया था। अगर रोज़े के ख़त्म होते ही तमाम गुनाहों में फिर से पड़ गए तो इससे यही बात समझ में आएगी कि उसने रोज़ा तो रखा मगर रोज़ा कुबूल नहीं हुआ। हज तो किया मगर हज कुबूल नहीं हुआ। आप इस तरह से रोज़ा रखिए कि कोई ग़ैर मुस्लिम भी देखे तो समझे कि यह वाकई रोज़ा रखें हैं और यह रमज़ान के दिन हैं। पूरे सम्मान को ध्यान में रखा जाए और तमाम चीज़ों को पूरा किया जाए। एक बार रसूलुल्लाह (स0अ0) ने इरशाद फ़रमाया:

"जब तुममें से कोई व्यक्ति रोज़ा रखे और उससे कोई उलझने लगे तो कह दे कि मैं रोज़े से हूं।" मन की तमाम कमज़ोरियों को दूर करे। गुस्सा कम कर दे। कपट व ईर्ष्या को दूर कर दे। रोज़ा इस तरह से न रखे कि गुस्से में भरा हुआ बैठा रहे और लोग उससे केवल

इस वजह से बात करते हुए ख़ौफ़ महसूस करें कि भाई उनसे बात न करो, वरना वह बिगड़ जाएंगे। खाने में ज़र्रा बराबर नमक की कमी हो तो गुस्से की इन्तिहा कर दे। इन तमाम बातों से परहेज़ करे। अगर रोज़े के सभी तक़ाज़ों का लिहाज़ रखा गया तो उसका असर पूरे ग्यारह महीनों पर पड़ेगा और उसकी ज़िन्दगी में एक साफ़ तौर पर दिखाई देने वाला बदलाव आएगा।

रोज़े का मंशा

चौथी बात यह है कि रोज़ा जिन चीज़ों से सुसज्जित किया गया है उसका ध्यान रखें। रोज़े का यह मंशा मालूम होती है कि ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह तआला की तरफ़ आकर्षित हुआ जाए। न तिलावत किया, न ख़ैरात की, न तरावीह पढ़ी, सिर्फ़ रोज़ा रख लिया उससे कोई फ़ायदा नहीं। तौबा व इस्तिग़फ़ार का ज़्यादा से ज़्यादा हो, दुआ की तरफ़ ज़्यादा ध्यान दिया जाए। आख़िरी शब (रात) में उठें क्योंकि उसकी ज़्यादा अहमियत है। अल्लाह तआला उस वक़्त पुकारता है कि कोई मेरा दोस्त इस वक़्त मुझे पुकारे और मैं उसको सुनूं। रसूलुल्लाह (स0अ0) इसका बहुत ध्यान रखते थे।

ख़ैरात व सदक़े का महीना

इस महीने में ख़ैरात व सदक़ा भी ज़्यादा करें। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने इस माहे मुबारक को नेकी और सुहानुभूति का महीना बताया है। यानि नेकी और ग़मख़्वारी का महीना। इसका मतलब यह है कि अल्लाह तआला की तरफ़ ज़्यादा ध्यान हो और सदक़ा व ख़ैरात में ज़्यादा हिस्सा लें और लोगों के हालात का सुराग लगाकर पता चलाएं। उनके यहां तोहफ़े और भेंट भेजे। अल्लाह के कितने बन्दे ऐसे हैं जिनको सिर्फ़ रोज़ा इफ़्तार करने के लिए मस्जिद में मिल जाता है फिर वह भूखे रहते हैं। इसलिए ऐसे ज़रूरतमन्द लोगों का पता लगाकर उनकी मदद की जाए। रसूलुल्लाह (स0अ0) इसका बड़ा ही ध्यान रखते थे। आपके बारे में आता है कि लोगों में सबसे ज़्यादा सख़ी (दानी) थे। दूसरे मौक़े पर आता है यानि तूफान की तरह दान करते थे और उसमें बढ़चढ़ कर हिस्सा लेते थे और दिल खोलकर ग़रीबों, बेवाओं और यतीमों की मदद करते थे।

तौबा व इस्तिग़फ़ार का महीना

इन्सान को समझना चाहिए कि हमारी इबादत क्या हम तो अल्लाह तआला के लायक़ कुछ भी इबादत नहीं कर सकते। हम तौबा व इस्तिग़फ़ार भी अच्छी तरह न हीं कर सकते इसलिए हमें भूखों, लाचारों और मिस्कीनों की ही मदद करनी चाहिए ताकि मुमकिन है कि अल्लाह के किसी बन्दे का दिल खुश हो जाए तो अल्लाह तआला उसको कुबूल फ़रमा ले तो हमारा मक़सद पूरा हो जाए। वरना हमारी इबादत, हमारी तिलावत, हमारी नमाज़ तो इस लायक़ नहीं कि कुबूल हों, लेनिक अल्लाह की राह में कुछ ख़र्च करने से मुमकिन है कि अल्लाह तआला उसी को कुबूल फ़रमाए। इस महीने में हमें पूरी तरह ख़ैरात और सदक़े की तरफ़ आकर्षित होना चाहिए और हम कमर कस लें कि इस महीने से पूरा फ़ायदा उठाएंगे। हदीस शरीफ़ में आता है कि 'यानि ऐ ख़ैर के चाहने वाले आगे बढ़ और ऐ बुराई चाहने वाले पीछे हो।' दूसरी जगह आता है कि अल्लाह तआला क़यामत के दिन बन्दे से पूछेगा कि:

"ऐ बन्दे मैं बीमार था, तू मुझे देखने नहीं आया, मैं भूखा था, तूने मुझे खाना नहीं खिलाया" बन्दा जवाब में कहेगा कि ऐ अल्लाह, तू कैसे बीमार हो सकता है? तू कैसे भूखा रह सकता है? तो अल्लाह तआला कहेगा कि "मेरा फ़लां बन्दा बीमार था, अगर तू उसको देखने आता तो मुझें वहां पाता, मेरा फ़लां बन्दा भूखा था अगर तू उसको खाना खिलाता तो तू मुझे वहां मौजूद पाता।"

हमदर्दी व सुहानुभूति, त्याग व भलाई का महीना

इसलिए यह ज़रूरी है कि जो मोहताज व बेवाएं हैं, जो फ़क़ीर व ग़रीब हैं उनकी मदद की जाए। ग़रीबों की जो लड़किया हैं उनकी शादी करा दी जाए। अगर हमने ऐसा न किया तो अल्लाह तआला क़यामत के दिन हमसे पूछेगा और सख़्त पूछताछ करेगा। यह हमारा माल नही है जिसे हम ख़र्च करते हैं, बल्कि यह अल्लाह की अमानत है। हम अगर इसको आयोजनों में ख़र्च करते हैं तो ग़लत करते हैं। अगर इसको व्यर्थ ख़र्च करते हैं तो नाजायज़ करते हैं। हमारे लिए जायज़ नहीं है कि हम उसको खर्च करे। हमें इसकी फ़िक्र होनी चाहिए कि कितनी बेवाएं और ग़रीब हैं। कितने मोहताज व फ़क़ीर हैं जिन्हें ज़रूरत है? हमें उन तमाम जगहों पर खर्च करना चाहिए जहां दूसरों की मदद हो सके और अल्लाह तआला राज़ी हो।

ईमान वालों का अक़ीदा

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी (रह0)

दुनिया में कोई भी चीज़ अपनेआप नहीं है, बल्कि सबकुछ अल्लाह तआला का दिया हुआ और उसी का बनाया हुआ है और यह सब बिना किसी मक़सद के नहीं है बल्कि हर चीज़ का एक मक़सद है और वह है इन्सान का इम्तिहान, यानि अल्लाह तआला दुनिया में इन्सानों को आज़माना चाहता है कि उनमें से अमल के एतबार से कौन सा शख़्स ज़्यादा अच्छा है, इसीलिए फ़रमाया कि हमने यह ज़ेब व ज़ीनत आज़माने के लिए बनाई है, दुनिया की तमाम लज़्ज़तें और फ़वाएद इसीलिए रखे हैं ताकि इन्सान की जांच हो सके और यह इम्तिहान लिया जा सके कि वह अच्छे आमाल करता है या बुरे। वह अपनी तबियत, अपनी ख़्वाहिश और अपने ज़ाहिरी फ़ायदे के ख़िलाफ़ करता है या फिर अपने ज़ाहिरी फ़ायदे के हुसूल में ही लगा रहता है और अल्लाह तआला के एहकामात की परवाह भी नहीं करता। क़ुरआन मजीद में अल्लाह तआला ने ईमान वालों की ज़िन्दगी की हक़ीक़त बताते हुए फ़रमा दिया है:

"बिलाशुब्हा अल्लाह ने ईमान वालों से उनके मालों और जानों को इस एवज़ में ख़रीद लिया है कि उनके लिए जन्नत है।"

अल्लाह तआला ने ईमान वालों की जानों और उनके मालों को ख़रीद लिया है, जिसके एवज़ में वह बन्दों को जन्नत जैसी नेमत अता फ़रमाएगा। जानों और मालों को ख़रीदने के बाद भी अल्लाह तआला ने इन्सानों को अख़्तियार दिया है और उस अख़्तियार को इस्तेमाल करने की इजाज़त दी है, जिस तरह किसी को आरियतन इस्तेमाल के लिए कोई चीज़ दी जाती है और देने वाला जब चाहता है उसको वापस ले लेता है। ठीक उसी तरह अल्लाह तआला ने हमारी जानों और मालों को ख़रीद लिया है कि जब तक तुम दुनिया में हो उसको इस्तेमाल करो, यह सब चीज़ें तुम्हारे ही पास रहेंगी, जब तुम दुनिया से जाओगे तो यहीं छोड़कर चले जाओगे और फिर वह सब अल्लाह को वापस हो जाएगा। वाक़्या यह है कि अल्लाह तआला ने यह दुनिया इसी हिसाब से बनाई है और इसी लिहाज़ से इन्सानों को पैदा किया है, तो इसको इसी ज़माने के हालात के लिहाज़ से आज़माया है कि इन हालात में तुम अच्छा अमल करके दिखाओ।

क़ुरआन मजीद की सूरह कहफ़ ईमान और माद्दियत की इसी तस्वीर की तरफ़ इशारा करती है। जिसके अन्दर बहुत से वाक़्यात के ज़रिये यह बताया गया है कि कोई चीज़ अपने से नहीं होती, बल्कि यह चीज़ें तो अल्लाह की बनाई हुई हैं और उसने हर चीज़ हिकमत से बनाई है, यूं ही तफ़रीहन नहीं बना दी है बल्कि हर एक चीज़ में हिकमत रखी है हत्ता कि मौजूदा दौर में जो माद्दी ज़राए हैं जिनमें इन्सान ने ग़ैर मामूली तरक़्क़ी की है, इन्टरनेट और क्लासकी वग़ैरह का इन्किशाफ़ किया है, आज सब लोग उन चीज़ों से फ़ायदा उठा रहे हैं लेकिन ऐसा नहीं है कि यह सब चीज़ें लोगों ने पैदा की हैं, बल्कि वाक़्या यह है कि सब चीज़ें लोगों ने मालूम कर लीं, पैदा करने और मालूम करने दोनों चीज़ों में फ़र्क़ हैं, मसलन एक कमरे में किसी शख़्स ने क़ीमती सामान भर रखा है आपको उसका इल्म नहीं है लेकिन जब आप उसका दरवाज़ा खोलकर अन्दर जाते हैं तो आप सव सामान से वाक़िफ़ हो जाते हैं, ज़ाहिर है कि आपने उस सामान को पैदा नहीं किया है और न ही उस सामान को अपने हाथ से कमरे में रखा है बल्कि आपने सिर्फ़ उसको मालूम किया है और फिर इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है लिहाज़ा आपको चाहिए कि इस्तेमाल करने से पहले पता करें कि वह सामान कमरे में क्यों रखा और किसने रखा। यह दोनों बातें मालूम करना ज़रूरी हैं, इसके बाद आप यह फ़ैसला कर सकते हैं कि उसका इस्तेमाल करना चाहिए या नहीं।

ठीक उसी तरह इन्सानों के सामने अल्लाह तआला यह सवाल रखता है कि पहले पता करो कि यह दुनिया किसने बनाई है और क्यों बनाई है, उसके बाद ही आप इस दुनिया के इस्तेमाल कर हक़ रखते हैं। जब आपका यह इल्म हो जाए तभी यहां की

चीज़ों को उनके इस्तेमाल का इस्तिहक़ाक़ होता होता है।

ज़ाहिर है जब इन्सान इस सवाल का जवाब तलाश कर लेगा कि दुनिया किसने बनाई है तो बात वाज़ेह हो जाएगी कि यह सब कायनात अल्लाह की बनाई हुई है। और जब यह पता चल जाएगा तो ज़रूरी है कि अल्लाह का एहसान माना जाए, फिर वह यह भी पता करे कि उसने यह दुनिया क्यों और किसके लिए बनाई है ताकि उसी मक़सद के मुताबिक़ अमल किया जा सके। हदीस में दुनिया की तख़लीक़ और इन्सानों के पैदा करने का मक़सद यूं बयान किया गया है:

"बिलाशुब्हा तुम्हारे लिए आख़िरत को बनाया गया है और दुनिया को तुम्हारे लिए बनाया गया है।" (शोएबुल ईमान लिल बैहिक़ी: 10581)

हदीस में दुनिया और इन्सान की तख़्लीक़ का मक़सद वाज़ेह कर दिया गया यानि दुनिया का हक़ यह है कि वह तुम्हारी ज़रूरतें पूरी करे और तुमको फ़ायदा पहुंचाए लेकिन तुम पर यह जिम्मेदारी है कि तुम आख़िरत की फ़िक्र करो और आख़िरत के लिहाज़ से अमल करो, गोया दुनिया हमारे हुस्ने मक़सद के लिए एक ज़रिया है लिहाज़ा हम उसमें इसराफ़ नहीं करेगें, बदनियती नहीं करेंगे, किसी का हक़ नहीं मारेंगे, किसी को नुक़सान नहीं पहुंचाएंगे और सिर्फ़ ज़रूरत के मुताबिक़ दुनिया का फ़ायदा उठाएंगे इसलिए कि यह दुनिया अल्लाह ने हमारे इस्तेमाल के लिए बनाई है लेकिन हमको अपनी आख़िरत के लिए बनाया है इसीलिए हम आख़िरत की फ़िक्र को अव्वलियत देंगे, क्योंकि हम आख़िरत ही के लिए पैदा किये गए हैं। हम दुनिया से बस इतना ही फ़ायदा उठाएंगे जितना हमारे लिए ज़रूरी है या जो आख़िरत के लिए ज़रूरी है।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) मक्का मुकर्रमा की सरज़मीन पर मबऊस हुए, जहां कुफ़्फ़ार ख़ालिस माद्दी ज़हन रखते थे, वह अल्लाह को मानते थे, मगर यह समझते थे कि अल्लाह सबकुछ बनाकर फ़ारिग़ हो गया है, अब दुनिया और उसमें जो कुछ है यह हमारा है और इसके मुताल्लिक़ हमें किसी के सामने जवाबदेह नहीं होना है। मौजूदा तमद्दुन का भी यही फ़लसफ़ा है, उसका अक़ीदा भी यही है कि दुनिया में जो कुछ है वह सब ख़ुद ब ख़ुद हुआ है, उसको किसी ने नहीं बनाया और हम इसको पूरी तरह अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ इस्तेमाल करने का हक़ रखते हैं, क्योंकि यह हमारे लिए ही है, ऐसे लोगों के नज़दीक अल्लाह का वजूद मानना या तौहीद का क़ायल होना कोई हक़ीक़त नहीं रखता, वह हर चीज़ की माद्दी तौजीह करते हैं, लेकिन आख़िर में आजिज़ व हैरान हो जाते हैं और जवाब देने से क़ासिर रह जाते हैं। अगर उनसे सवाल किया जाए कि कायनात का इतना ज़्यादा दक़ीक़ निज़ाम यह सब अपनेआप कैसे मुमकिन है, तो इस पर वह परेशान हो जाते हैं और उनको कोई जवाब नहीं बनता, अलबत्ता उनमें से जो बहुत समझदार क़िस्म के लोग होते हैं वह बस इतना कहकर छोड़ देते हैं कि इससे तो यही मालूम होता है कि यह सब कुछ किसी बड़ी ताक़त ने ही किया है मगर उसको मानना या उसको बुनियाद बनाना उनके मिज़ाज में शामिल नहीं है, इसलिए कि उनकी बुनियाद ख़ालिस माद्दी है।

मगर हक़ीक़त यह है कि हर चीज़ अल्लाह के हुक्म से होती है, बीमारी अल्लाह के हुक्म से होती है, सेहत अल्लाह के हुक्म से होती है, लोगों की उमरें अल्लाह की मुक़र्रर की हुई हैं और इन्सान जहां पैदा हुआ है, जिस ख़ानदान में पैदा हुआ है और जिन हालात में पैदा हुआ है, यह सब भी अल्लाह तआला की तरफ़ से पहले से मुक़र्रर है जिसको अल्लाह ने "अलकिताब" से ताबीर फ़रमाया है। अल्लाह तआला ने इस कायनात को पैदा करने से पहले पूरा निज़ाम बना दिया है और इसी निज़ाम के मुताबिक़ दुनिया में हर चीज़ चल रही है, अल्लाह तआला ने यह निज़ाम सिर्फ़ बनाकर नहीं छोड़ दिया है, बल्कि हर चीज़ उसकी इजाज़त से चल रही है, बारीक से बारीक चीज़ भी अल्लाह के इल्म में है और वह उसी की इजाज़त से हो रही है, हत्ता कि दवाएं भी अल्लाह की इजाज़त से फ़ायदा करती हैं, अल्लाह तआला जिस दवा का फ़ायदा चाहे रोक सकता है, ईमान वालों को यही अक़ीदा बताया गया है।

रोज़े का मक़सद

मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह0)

रोज़ा नाम है रुकने का, लेकिन किन–किन बातों से रुकना? तो बहुत सी बातें वाजिब हैं और बहुत सी फ़र्ज़ हैं और बहुत सी मुस्तहब हैं। फ़र्ज़ कामों का इस्लाम में जो स्थान है वो सबसे ऊंचा है, जब तक कि आखिरी रुकावट पेश न आ जाए उस समय तक उनको छोड़ने की आज्ञा नही, फ़र्ज़ नमाज के बारे में हदीस में आता है कि अगर खड़े होकर नही पढ़ सकते तो बैठ कर पढ़ो अगर बैठ कर नही पढ़ सकते तो लेट कर पढ़ो। दूसरे फ़र्ज़ों के बारे में भी इस्लाम की शिक्षा यही है। उनके लिए विशेष तौर पर पहले से व्यवस्था करने का आदेश है और क्यों न हो, उन फ़र्ज़ों की हैसियत उस ग़िज़ा (खाद्य पदार्थ) की है जिसके बगैर रूह ज़िन्दा नही रह सकती, मानव प्रकृति के अनुसार ग़िज़ा जितनी अधिक लाभदायक, स्वाटिष्ट, और ताक़तवर होती है शरीर को उसी के अनुसार क्षमता प्राप्त होती है। यही हाल इस रूहानी ग़िज़ा का है, इसको बेहतर बनाने की जितनी पहले से चिन्ता की जाती है, रूह को उसी के अनुसार क्षमता व निर्बलता प्राप्त होती है। आप (स0अ0व0) रजब के महीने का चांद देखकर ये दुआ ज़बान मुबारक से इरशाद फ़रमाते थे : (अनुवादः ऐ अल्लाह! रजब शाबान में बरकत अता फ़रमा और रमज़ान तक हम को पहुंचा दे) रमज़ानुल मुबारक के इन फ़र्ज़ रोज़ो के महत्व का अन्दाज़ा इस हदीस से हो सकता है कि एक दिन का रोज़ा भी बिना किसी शरई कारण के छोड़ दिया गया तो बाद में उसकी क़ज़ा तो हो जाएगी लेकिन पूर्ति नही हो सकती चाहे वो ज़िन्दगी भर रोज़ा रखता रहे। इस्लाम में फ़र्ज़ों का विशेष महत्व है। उनकी हैसियत केवल एक ड्यूटी की नही है बल्कि वो अल्लाह की रज़ा का सबसे बड़ा ज़रिया हैं। हदीस में आता हैः (अनुवादः अपनी रज़ा देने के लिए जो चीज़ मुझे सबसे अधिक पसन्द है वो चीज़ फ़र्ज़ हैं) इस मुबारक महीने के महत्व व श्रेष्ठता को उजागर करने के लिए ये भी आप (स0अ0व0) का नियम रहा है कि आप (स0अ0व0) ने इसकी शुरूआत में सभी लोगों के सामने तक़रीर करते थे, सही इब्न खुजैमा ये खुत्बा मनकूल है, इमाम बीहक़ी ने शुएबुल ईमान में भी उसको नक़ल किया है।

हज़रत सलमान फ़ारसी रह0 फ़रमाते हैं कि अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) ने शाबान के आखिरी दिन हमें ख़िताब फ़रमाया, इरशाद हुआ; "ऐ लोगों! एक अज़ीम महीना तुम्हारे सरों पर साया करने वाला है, बड़ा मुबारक महीना है, ऐसा महीना है कि उसमें एक रात ऐसी है जो हज़ार महीनों से बेहतर है, उसके रोज़े अल्लाह ने फ़र्ज़ किये हैं और उसकी रातों को जागने को स्वंय से निकटता की चीज़ बनाया है, इसमें जो भी किसी भले काम से अल्लाह के क़रीब जाएगा वो ऐसा है जैसे उसने फ़र्ज़ अदा किया और जिसने उसमें फ़र्ज़ अदा किया वो ऐसा है जैसे उसने दूसरे महीने में सत्तर फ़र्ज़ अदा किये, ये सब्र का महीना है और ऐसा महीना है कि उसमें मोमिन का रिज़्क़ बढ़ा दिया जाता है, जो इसमें किसी रोज़ादार को इफ़तार कराए तो वो उसकी मग़फ़िरत और जहन्नम से निजात का ज़रिया है और उसको उसी के बराबर सवाब मिलेगा और रोज़े के सवाब में भी कुछ कमी न की जाएगी, लोगों ने कहा कि हम में ऐसे लोग नही जो रोज़ादार को अफ़तार करा सकें, आप (स0अ0व0) ने फ़रमायाः अल्लाह तआला ये सवाब उसको भी दे देते हैं जो एक खजूर से, एक घूंट पानी से या एक घूंट दूध से अफ़तार कराए, ये ऐसा महीना है कि इसका पहला हिस्सा रहमत, दूसरा हिस्सा मग़फ़िरत, और तीसरा हिस्सा जहन्नम से निजात का है, इसमें जो अपने गुलाम, नौकर से बोझ हल्का कर दे तो अल्लाह तआला उसकी मग़फ़िरत फ़रमा देते हैं और जहन्नम से उसको निजात दे देते हैं, इसमें चार चीज़ों की कसरत किया करो, दो चीज़ें ऐसी हैं जिनसे अपने रब को राज़ी करो, और दो चीज़े ऐसी हैं जिनसे तुम्हे छुटकारा नही, वो दो चीज़ें जिनसे तुम अपने रब को राज़ी करो वो कलमा शहादत और अस्तग़फ़ार है और दो चीज़ जिनसे तुमको छुटकारा नही वो रहमत की तलब और जहन्नम से पनाह मांगना है जो उसमें से किसी रोज़ेदार को खिलाए अल्लाह तआला उसको मेरे हौज़ से ऐसा जाम पिलांएगे कि फिर वो प्यासा न होगा यहां तक कि जन्नत में दाख़िल हो जाएगा।"

अल्लाह ने हमको जो यह रमज़ान दिया है इसीलिए दिया है कि हमारा बातिन ठीक हो जाए, बतन भी ठीक हो जाता है, लेकिन दोनों काम एतदाल से किये जाएं, इसीलिए हमें कोशिश करनी है कि हम तक़वा वाली ज़िन्दगी गुज़ारे और अपने को तैयार करने वाले हो जाएं और हम जिस गुनाह में पड़े हैं, सोच–सोच कर उसको दूर करने की कोशिश करें, और मश्क़ करें कि यह काम अब नहीं करना है, अल्लाह पाक हमें तौफ़ीक़ दे।

सच्चाई क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

ईमान और झूठः

हज़रत सफ़वान बिन सलीम (रज़ि0) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से पूछा गयाः क्या मोमिन बुज़दिल हो सकता है? रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः हां, फिर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से सवाल किया गयाः क्या मोमिन बख़ील हो सकता है? फ़रमायाः हां, फिर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से पूछा गयाः क्या मोमिन झूठा हो सकता है? रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः नहीं।

मोमिन और बुज़दिलीः

मज़कूरा हदीस में रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से मोमिन के बुज़दिल होने के बारे में पूछा गया, जिस पर रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि हां ऐसा होना मुमकिन है, दरअस्ल बाज़ तबियतें ऐसी होती हैं जो अपने अन्दर ताक़त नहीं रखते और कोई बात बर्दाश्त नहीं कर पाते, उनके मिज़ाज के अन्दर थोड़ी सी कमज़ोरी होती है जो कभी–कभी बुज़दिली की हद तक पहुंच जाती है। बाज़ बड़ों के बारे में भी ऐसे वाक़्यात मिलते हैं कि उनके अन्दर ऐसी कमज़ोरियां थीं, बाज़ मर्तबा यह एक तबई कमज़ोरी होती है, जिसको बुज़दिली न भी कहें तो ठीक होगा।

हज़रत हस्सान (रज़ि0) के बारे में आता है कि जिस्मानी ऐतबार से उनको कुछ ऐसी कमज़ोरी थी कि वह जिहाद में नहीं जा सकते थे, अगर उनके सामने कोई ऐसी सख़्त बात कही जाती थी तो उनके लिए बर्दाश्त करना मुश्किल हो जाता था, जबकि वह ख़ुद दूसरी तरफ़ बहुत बड़े इस्लामी शायर थे और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के दिफ़ाअ में ऐसे अशआर कहते थे कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने उनके बारे में फ़रमायाः उनके अश्आर तो दुश्मनों के लिए उनके ख़िलाफ़ तीर से ज़्यादा सख़्त हैं। गोया जिस तरह किसी को तीर लगता है उससे ज़्यादा उनके अश्आर लगते थे और बिलाशुब्हा यह उनके लिए बड़ी अज़मत की बात है कि आप (स0अ0व0) ने उनके लिए मस्जिद–ए–नबवी में मेम्बर रखवाते थे और उनसे कहते थे कि अश्आर पढ़ो। लेकिन उनके अन्दर यह एक कमज़ोरी थी कि वह कोई बात बर्दाश्त नहीं कर पाते थे और उनके लिए जंग में शिरकत मुश्किल होती थी। इसी तरह बाज़ लोग ऐसे होते हैं जिनकी कमज़ोरी बहुत ज़्यादा होती है और वह बुज़दिली तक पहुंच जाती है, लेकिन ईमान के साथ इस बुज़दिली वाली कमज़ोरी का होना मुमकिन है, क्योंकि बाज़ तबाए ऐसे होते हैं जिनमें इस तरह की कमज़ोरी हो सकती है। इसीलिए रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि मोमिन का बुज़दिल होना मुमकिन है।

मोमिन और बुख़्ल (कंजूसी):

इसके बाद रसूलुल्लाह (स0अ0व0) से सवाल किया गया कि क्या मोमिन बख़ील हो सकता है? इसका जवाब देते हुए रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने फ़रमायाः हां! यह भी मुमकिन है कि मोमिन बख़ील हो। दरअस्ल यह भी एक ऐसा मसला है कि बाज़ तबियतें ऐसी होती हैं जिनपर चमड़ी जाए दमड़ी न जाए वाली मशहूर मिसाल सादिक़ आती है। यानि उनके पास से पैसा न जाए चाहे कुछ भी हो जाए। कभी–कभी बहुत से लोग इसमें भी गुलू कर जाते हैं, यहां तक कि बाज़ मर्तबा बहुत से दीनदारों में भी ऐसी बातें होती हैं कि वह फ़राएज़ की हद तक तो ख़र्च कर लेते हैं और किसी तरह मारे–बांधे ज़कात अदा कर देते हैं, जबकि अब तो बहुत से ईमान वाले ज़कात भी अदा नहीं करते, लेकिन वह लोग जो किसी तरह मुश्किल से ज़कात का फ़र्ज़ अदा करते हुए पैसा निकालते हैं, अगर उसके बाद कोई उनसे ज़रा सा भी तक़ाज़ा कर दे तो उनके लिए बड़ी मुश्किल हो जाती है, यहां तक कि वह ख़ुद अपने घर में ख़र्च करने में बड़े बख़ील होते हैं और कभी–कभी इस सिलसिले में इतना आगे बढ़ जाते हैं कि लोग परेशानी में पड़ जाते हैं, गोया यह भी मिज़ाज की एक

बात होती है और बाज़ लोग ऐसे होते हैं जो इस सिलसिले में हद से बढ़ जाते हैं, हालांकि ईमान वाले के बारे में कुरआन में आता है कि जब ख़र्च करते हैं तो उनकी शान यह होती है:

"जो ख़र्च करते हैं तो न फ़िज़ूल ख़र्ची करते हैं और न तंगी और उनका ख़र्च एतदाल के साथ होता है।" (सूरह फ़ुरक़ानः 67)

ईमान वालों की सिफ़त यह बयान की गयी है कि जब वह ख़र्च करते हैं तो न वह इसराफ़ से काम लेते हैं और न तंगी या कमी करते हैं, बल्कि वह दरमियान में रहते हैं, बीच का रास्ता और एतदाल का जो रास्ता है वह अख़्तियार करते हैं, एतदाल ईमानवाले की सिफ़त है, बाज़ लोग समझते हैं कि ख़ूब अलल्ले–तलल्ले उड़ाओ, तो यह जाएज़ और ठीक नहीं। अलबत्ता ख़ैर के कामों में ख़र्च करना एक अलग बात है, जितना भी आदमी अल्लाह के लिए ख़र्च करता चला जाए, उतना ही अच्छा है, मशहूर हैः (ख़ैर के काम में इसराफ़ नहीं और इसराफ़ में कोई ख़ैर नहीं)

मतलब यह है कि ख़ैर के कामों में आदमी ख़ूब अल्लाह के लिए उड़ा रहा है, उड़ा नहीं बल्कि दे रहा है, तो यह अच्छी बात है और हदीस में इसकी फ़ज़ीलत बयान हुई हैः "हसद का जवाज़ सिर्फ़ दो सूरतों में मुमकिन था, एक यह कि किसी शख़्स को अल्लाह ने ख़ूब माल व दौलत से नवाज़ा हो और वह उसको शब व रोज़ बेदरीग़ ख़र्च करता हो और दूसरे यह कि अल्लाह ने किसी को कुरआन की दौलत अता की हो और वह शब व रोज़ इसी (की तिलावत, तालीम व तदरीस) में लगा रहता हो।" (सुनन तिरमिज़ीः 2061)

हदीस के अल्फ़ाज़ ख़ुद बता रहे हैं कि अल्लाह तआला ने अगर किसी शख़्स को माल व दौलत से नवाज़ा है और वह उस दौलत को राहे हक़ में लुटाता है, ख़ूब ख़र्च करता है, तो यह चीज़ अल्लाह को बहुत पसंद है और इसको बाइसे रश्क़ समझा गया है और इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन अगर कोई शख़्स दौलत मिलने पर इस तरह इसराफ़ करे कि जहां ख़र्च नहीं करना चाहिए वहां ख़र्च कर रहा है, मकान, दुकान, अपनी गाड़ी, अपने कपड़े, अपनी ज़रूरतें जो आसानी से पूरी हो सकती हैं, उनमें तजाउज़ कर रहा है, जैसा कि मालदार के यहां एक आम सा रिवाज हो गया है, यह सब ग़लत है। अब लोग यह नहीं देखते कि जो काम कम में हो सकता है वह कम में ही कर लें, बल्कि उसको दिखावे के लिए और ज़्यादा करते हैं।

बाज़ लोग अपना मामूली लिबास ही कई–कई हज़ार रुपये का बनाते हैं, जबकि कम पैसों में भी काम चल सकता है। हां इस बात से इनकार नहीं कि कई बार ज़रूरत के तहत क़ीमती चीज़ भी इस्तेमाल करनी पड़ती है, जैसे बाज़ ताजिर ऐसे हैं कि वह जिस चीज़ की तिजारत कर रहे हैं, अगर वह ख़ुद उसमें एक लेवल पर नज़र नहीं आएंगे तो उन्हें कोई अहमियत ही नहीं देगा, इसके लिए उन्हें ज़रूरियात के तहत मंहगा सामान इस्तेमाल करना पड़ता है। मुझे कपड़े के एक ताजिर ने अपना कपड़ा दिखाया और बताया कि यह कपड़ा एक हज़ार रूप्ये मीटर का है, वह देखने में बहुत मामूली था मगर क़ीमत इतनी ज़्यादा थीं, उसने बताया कि जब हम लोग कपड़ा ख़रीदने के लिए जाते हैं तो वह लोग हमारे इसी कपड़े को देखकर हमारे मेयार का अंदाज़ा कर लेते हैं और उसी के मुताबिक़ माल देते हैं। इसीलिए यह हमारी एक मजबूरी है तो अगर ऐसी कोई मजबूरी या ज़रूरत है तो इस्तेमाल करने में हर्ज नहीं, मगर बिला ज़रूरत महज़ दिखावे के लिए इसराफ़ करना यक़ीनन ग़लत है और पैसे का ज़ाया करना है।

हासिले बहस यह कि बहुत से मिज़ाज ऐसे होते हैं जिनसे पैसा निकलता ही नहीं। हमने बहुत से लोगों को देखा है कि वह आम तौर से जो लोग देहात के होते हैं, उनके अन्दर यह बात कुछ ज़्यादा ही होती है, हमने करोड़पती लोगों तक को देखा है कि वह फटे–पुराने कपड़े पहने टहल रहे हैं, क्योंकि बस वह उनका एक मिज़ाज बन गया है, उनकी जेब से पैसा निकलता ही नहीं, हत्ता कि उनके घर वाले भी उनसे परेशान हैं। ज़ाहिर है कि यह इन्तिहाई नामुनासिब बात है, अल्लाह ने माल दिया किस लिए है?

कुरआन मजीद में तो हैः

"और जो आपके रब की नेमत है उसको बयान करते रहें।" (सूरह जुहाः 11)

इससे पता चला कि अगर अल्लाह ने माल की नेमत दी है तो उसका कुछ असर भी ज़ाहिर होना चाहिए, मगर इसमें एतदाल ज़रूरी है, ख़ैर के रास्तों में ख़ूब ख़र्च करे और ख़ुद पर मोहतात होकर ख़र्च करें।

रमज़ानुल मुबारक का पैग़ाम

महमूद हसन हसनी नदवी

यदि कोई व्यक्ति अल्लाह तआला से अधिक अधिक से निकटता प्राप्त करना चाहता है तो फिर वह रोज़े का सहारा लेकर अल्लाह तआला की निकटता आसानी से प्राप्त कर सकता है। इसलिए कि रोज़ा अल्लाह की निकटता का सबसे बड़ा साधन है। जो इस उम्मत को दुनिया की दूसरी जातियों से आगे बढ़ने के लिए नेमत के रूप में दिया गया है। क्योंकि दुनिया में जो पहली क़ौमें गुज़री हैं उनके बारे में कहा गया है कि उनकी उम्रें ज़्यादा होती थीं और इसीलिए उनके आमाल भी अधिक होते थे, यहां तक कि कुछ लोगों के बारे में मालूम होता है कि ऐसे भी गुज़रे हैं जिन्होंने अस्सी–अस्सी साल इस तरह गुज़ारे कि एक लम्हे के लिए भी उन्होंने अल्लाह की नाफ़रमानी नहीं की। इसीलिए उन लोगों के आमाल को देखकर सहाबा किराम को रश्क आया कि वे तो बहुत आगे चले जाएंगे और क्योंकि हमारी उम्रें भी इतनी नहीं होंगी तो हम वहां तक नहीं पहुंच सकते हैं। लेकिन अल्लाह तआला ने मुस्लिम उम्मत की उम्र कम होने के बावजूद भी कम आमाल पर ज़्यादा सवाब देने का वादा फ़रमा दिया और पिछली उम्मतों के बुज़ुर्गों के वो आमाल जो उन्होंने अपनी पूरी ज़िन्दगी में किए थे, अल्लाह तआला ने मुस्लिम उम्मत को उन्हीं आमाल पर मिलने वाले सवाब का वादा एक ही रात (शब–ए–क़द्र) में देने का वादा फ़रमा दिया है। और रोज़ा रखने का हुक्म दिया जिसमें जिसमें एक फ़र्ज़ के अदा करने के सवाब को सत्तर फ़र्ज़ों के बराबर कर दिया गया, इसी तरह अल्लाह ने मुस्लिम उम्मत को ख़ास तौर पर कुछ और ऐसे नुस्ख़े भी दिये जिनको अगर कोई इस्तेमाल कर ले तो रूहानी एतबार से उसको बुलन्द मक़ाम हासिल हो जाए, क्योंकि अल्लाह ही अस्ल मालिक है और उसको सबकुछ अख़्तियार है कि जिसको जिस क़दर चाहे उतना नवाज़ दे।

रमज़ान का रोज़ा अल्लाह ने इसलिए भी फ़र्ज़ किया है क्योंकि अल्लाह तआला बखूबी जानता है कि अगर बन्दों पर कोई हुक्म फ़र्ज़ न किया जाए, तो केवल तालीम देने में बन्दे सुस्ती अपनाएंगे लेकिन जब किसी चीज़ को फ़र्ज कर दिया गया तो अदा करना ज़रूरी हो जाएगा इसीलिए रमज़ान के रोज़ों को फ़र्ज़ किया गया और उसके अलावा फ़रमा दिया गया कि अगर कोई रूहानियत में और ज़्यादा बुलन्द मक़ाम हासिल करना चाहता है तो हर महीने में तीन रोज़े रख सकता है। मुहर्रम में दो रोज़े रख सकता है। शव्वाल (ईद बाद) के छः रोज़े रख सकता है। जिस पर बहुत सवाब भी रखा गया है और उससे बढ़कर सयाम दाउदी है कि एक दिन रोज़ा रखा जाए एक दिन न रखा जाए, जिस पर अगर कोई व्यक्ति पाबन्दी कर ले तो सवाब की इन्तिहा ही नहीं है।

अरबी में "सौम" का शब्द उन घोड़ो के लिए बोला जाता है जो रेस के लिए लाए जांए और उनको सधाने के लिए कुछ रोज़ तक उनका खाना बन्द कर दिया जाए ताकि वे अच्छी तरह से दौड़ के लिए तैयार हो जाएं, लेकिन कुछ दिनों के बाद उनको बतदरीज कुछ–कुछ खाना देते हैं ताकि उन घोड़ों के मुकाबले में जो खाते पीते हैं, ये घोड़े आगे निकल जाएं। लिहाज़ा ऐसे घोड़ों को अरबी में "अरफ़रसुस्साइमा" कहा जाता है यानि रोज़ेदार घोड़े। इसी तरह हमारे लिए भी ये रोज़े जिसको अरबी में सौम कहा जाता है, हमारी रूहानी ज़िन्दगी में आगे बढ़ने के लिए अल्लाह तआला ने हमको दिए हैं यानि अगर हम चन्द घंटो के लिए कुछ दिनों को खाने पीने और दूसरी चीज़ों को छोड़ दें तो रूहानियत में आला मक़ाम हासिल कर लेंगे और रूहानियत के मैदान में तेज़ रफ़्तार के साथ कुछ दौड़ लगाएंगे, लेकिन इसके लिए ज़रूरी ये है कि हमारे ऊपर ज़्यादा बोझ न हो, क्योंकि इन्सान जब दौड़ लगाता है तो सारे सामान को यहां तक कि अपने ज़रूरी कपड़ों के सिवा हर चीज़ को किनारे रख देता है ताकि सही तरह से दौड़ सके। अतः इस तरह हमें रूहानियत के मैदान में दौड़ने के लिए ये ज़रूरी होगा कि हम अपने गुनाहों का बोझ उतार दें, ताकि दौड़ने में आसानी हो सके। इसीलिए रोज़े के मक़सद को बयान करते हुए ये भी फ़रमाया गया है कि इसका मक़सद यह है कि तुम मुफ़्ती बन जाओ, और तक़वे का फ़ायदा यही है कि वो गुनाहों को हटाता चला जाता है।

तक़वे के बहुत से दर्जे हैं, पहला दर्जा यह है कि इन्सान शिर्क जैसी गंभीर बीमारी और गन्दे बोझ से बरी हो जाए जो इन्सान को धंसा देता है, तबाह कर देता है, अपाहिज बना देता है। और उसके बाद तक़वे का दूसरा

दर्जा यह है कि इन्सान आरोप और खुराफ़ातों से दूर रहे। फिर इसके बाद तक़्वे का दर्जा यह है कि इन्सान गुनाह छोड़ता चला जाए, जिसके छोड़ने से तबियतें हल्की हो जाती हैं और आजकल लोगों की तबियतों के बोझिल होने का बड़ा कारण यही है कि इन्सान गुनाहों और रस्म व खुराफ़ात में इस क़दर पड़ चुका है कि हर तरफ़ से परेशानियों का खुद ब खुद शिकार होता चला जाता है। हालांकि अगर वो गुनाहों और बेजा रस्मों को छोड़ दे तो इन्सान की तबियत अपने आप हल्की हो जाएगी।

कुरआन करीम में ये साफ़ कर दिया गया है कि तुम पर रोज़े फ़र्ज़ किए गये हैं, जैसा कितुमसे पहले लोगों पर किए गये थे, यानि इन रोज़ें का इस उम्मत पर फ़र्ज़ होना कोई अनोखी बात नहीं है, क्योंकि रोज़ा यहूदी भी रखते थे, ईसाई भी रखते थे और भारत में हिन्दु भी व्रत के नाम से रोज़ा रखते हैं। लेकिन हक़ीक़त ये है कि आज सभी धर्मों के मानने वालों ने रोज़े की शक्ल को बिगाड़ दिया है, सिवाए इस्लाम के। इसीलिए रोज़ा अस्ल में यही है जो इस्लाम का दिया हुआ है और अस्ल में यही वो रोज़ा है जो दूसरे धर्मों में भी मौजूद था, इसीलिए फ़रमाया गया कि पहलो पर भी फ़र्ज़ किया गया और तुम पर भी किया जा रहा है, लिहाज़ा घबराने की कोई बात नही।

रोज़ा इन्सान को रूहानी एतबार से आगे बढ़ाने के लिए बेहतरीन ज़रिया है और इन्सान को गुनाहों के बोझ से हल्का करने का बेहतरीन नुस्ख़ा है। क्योंकि बाक़ी फ़र्ज़ अदा करने में आम तौर पर दूसरे लोगों को भी पता चल जाता है लेकिन रोज़ा ऐसी चीज़ है जिसकी अदायगी का सिवाए अल्लाह के किसी को इल्म नहीं होता है, इसलिए कि जब इन्सान सहरी खाता है और वुज़ू करता है तो अगर चुपके से थोड़ा सा पानी भी पी ले किसी को मालूम नहीं हो सकता कि उन्होंने पानी पिया है लेकिन बन्दा ऐसी ग़लत हरकत नहीं करता है। इसीलिए अल्लाह तआला फ़रमाता है कि रोज़ा मेरे लिए है मैं ही इसका बदला दूंगा जिससे ऊंची बात कुछ नहीं हो सकती है कि मालिक खुद कह रहा है कि हर चीज़ का बदला मानो की नाप तौल कर दिया जाएगा, लेकिन जब रोज़े का नम्बर आएगा तो उसका बदला मैं खुद अपने एतबार से दूंगा। इसीलिए हजरत शेखुल हदीस रह0 ने इसका तरजुमा यूं भी लिखा है कि रोज़े का बदला मैं (अल्लाह तआला) खुद हूं।

इसी तरह रोज़ेदार के बारे में फ़रमाया कि अल्लाह तआला को रोज़ेदार के मुंह की बू मुश्क की खुशबू से ज़्यादा पंसद है। ये भी मुहब्बत की बात है, क्योंकि जिसको जिससे ज़्यादा मुहब्बत होती है तो उसको उसके अन्दर बदबू महसूस नहीं होती।

इन्सान को रोज़े की हालत से अपनी ज़बान की हिफ़ाज़त का ख़ास तौर से ध्यान रखना ज़रूरी है। लेकिन आजकल रोज़े की हालत में भी झूठ, ग़ीबत, गाली–गलौज भी जारी रहता है, लिहाज़ा ये बात ध्यान रहे कि ऐसे रोज़े का अल्लाह तआला के यहां कोई सवाब मिलने वाला नहीं है। इसीलिए अगर हम ये चाहते हैं कि अपने रोज़े को रोज़ा बनांए तो उन सभी बातों का ख़्याल रखना पड़ेगा कि जन्नत की हवाओं का ख़ास मज़ा हमको भी हासिल हो सके और अगर इन बातों को नहीं छोड़ा गया तो रमज़ान हो या कोई भी महीना हो इन्सान को कुछ भी फ़ायदा मिलने वाला नहीं है। लेकिन अगर कोई शख़्स सही नियत के साथ उन सभी बातों से परहेज़ करते हुए सवाब की लालच में रोज़ा रखे, तो अल्लाह उसके सभी गुनाहों को बख़्श देगा, मगर ईमान और सवाब की तमन्ना शर्त है।

अल्लाह तआला ने इन्सान के वास्ते रोज़े को आसान करने के लिए जो असबाब हो सकते थे उनको उपलब्ध करा दिया, क्योंकि अल्लाह तआला ने दुनिया को कारणों का घर बनाया है, इसलिए ऐसे कारण भी रख दिये हैं ताकि जो सुन्नत की पैरवी करने वाले हैं उनको रोज़ा रखने में परेशानी न हो। लिहाज़ा जितनी चीज़ें बाधा पहुंचाने वाली हों उन सारी चीज़ों को रोज़े में बन्द कर दिया गया यानि जो सरकश शैतान हैं उनको क़ैद कर दिया गया, और शैतान इस तौर पर बांध दिये जाते हैं कि वो रोज़ेदार को कोई भी नुक़सान नहीं पहुंचाते। इसके अलावा रमज़ान में जन्नत के दरवाज़े खोल दिए जाने का मतलब ये होता है कि जन्नत से एक ख़ास क़िस्म की हवा आने लगती है, जिसकी कैफ़ियत जबकि हर व्यक्ति महसूस नहीं करता लेकिन जो अल्लाह वाले हैं वो अवश्य महसूस करते हैं और जहन्नम के दरवाज़े बन्द कर दिये जाने का मतलब ये है कि उसके जो बुरे असरात पड़ रहे होते हैं वे समाप्त हो जाते हैं।

रोज़े के मुख़्तलिफ़ मसले

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

सहरी व नियत

रोज़े चाहे रमज़ान का हो चाहे किसी और चीज़ का। बहरहाल उनके लिये सहरी खाना सुन्नत है। रोज़े की शुरूआत सुबह–ए–सादिक (प्रातः काल का समय) के उदय होने से होती है और ये सूरज डूबने पर ख़त्म होता है। इसलिये शरीअत ने यह सहूलत दे रखी है कि रोज़ेदार सुबह होने से पहले सहरी खा ले ताकि रोज़े में ताक़त बहाल रहे। अलग–अलग हदीसों में आप (स0अ0व0) ने इसका शौक़ दिलाया है। इसीलिये सहरी में सवाब होने पर उम्मत एकमत है। सहरी उतनी देर तक खायी जा सकती है कि सुबह होने की शंका न हो, रात के बचे होने का भी शक न हो। हज़रत ज़ैद बिन साबित रज़ि0 से रिवायत है कि हम लोग जब रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के साथ सहरी करते थे तो सहरी और फ़ज्र की अज़ान के बीच पचास आयत की तिलावत के बराबर का अन्तर होता था। आम तौर इतना कुरआन पांच–छः मिनट में पढ़ा जाता है।

अगर इस ख़्याल से सहरी खाई कि अभी सुबह नहीं हुई है हालांकि सुबह हो चुकी थी तो रोज़े की क़ज़ा वाजिब (अनिवार्य) होगी, कफ़्फ़ारा वाजिब (अनिवार्य) नहीं होगा, अगर शक हो कि शायद फ़ज्र का वक़्त हो गया तो बेहतर है कि खाना–पीना छोड़ दे फिर भी अगर खा ले और सुबह होने का यक़ीन न हो तो उसका रोज़ा हो जायेगा।

इसीलिये आप (स0अ0व0) का इरशाद है: "सहरी खाओ सहरी में बरकत है।" (बुख़ारी 1923)

एक दूसरी हदीस में आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया: "हमारे और अहले किताब (यहूदी, इसाई इत्यादि) के रोज़ों में अन्तर और श्रेष्ठता सहरी खाने की है (हम खाते हैं और वो नहीं खाते हैं)।" (मुस्लिम 2550)

रही नियत तो इसके बग़ैर रोज़ा नहीं होगा। इसीलिये अगर एक व्यक्ति सुबह से शाम तक उन सभी चीज़ों से परहेज़ करे जिनसे रोज़ादार परहेज़ करता है लेकिन उसकी नियत रोज़ा रखने की न हो तो उसका रोज़ा नहीं होगा। इसीलिये आप (स0अ0व0) का इरशाद है: "जो फ़ज्र से पहले ही नियत न करे उसका रोज़ा नहीं होगा।" (तिरमिज़ी 730)

कई दूसरी हदीसों को देखते हुए फ़ुक़्हा (धार्मिक विद्वान) ने फ़रमाया कि ज़वाल (अर्थात सूर्य का सर के ठीक ऊपर होना) से एक घन्टा पहले नियत कर ले किन्तु शर्त यह है कि कुछ खाया–पिया न हो तो रमज़ान का और नफ़िली रोज़ा रखना दुरूस्त होगा और नियत का केन्द्र क्योंकि दिल होता है इसलिये सिर्फ़ दिल में ये इरादा कर लेना काफ़ी है कि कौन सा रोज़ा रख रहा हूं ज़बान से कहना ज़रूरी नहीं यद्यपि बेहतर यही है कि ज़बान से भी कह दे। (हिन्दिया 1/195)

जिन चीज़ों से रोज़ा नहीं टूटता

भूल कर खाने–पीने, सर में तेल लगाने और नहाने–धोने से रोज़ा नहीं टूटता है। अगर दिन में सो जाये और एहतलाम (वीर्य स्खलित होना) हो जाये तो रोज़ा नहीं टूटता है। इसी तरह दिन में इन्जेक्शन लगवाने से रोज़ा नहीं टूटता है लेकिन बेहतर यही है कि अगर बहुत सख़्त ज़रूरत न हो तो इफ़्तार के बाद इन्जेक्शन लगवाये। मिस्वाक चाहे ताज़ी या हरी हो या ख़ुश्क और सूखी हो उससे रोज़ा नहीं टूटता है यद्यपि मन्जन इत्यादि करना मकरूह है और अगर मन्जन हलक़ के नीचे उतर जाये तो रोज़ा टूट जायेगा। अगर ज़बान से कोई चीज़ चखकर थूक दे तो रोज़ा नहीं टूटता, यद्यपि अनावश्यक ऐसा करना मकरूह है।

रमज़ान के महीने में अगर किसी का रोज़ा किसी वजह से टूट जाए तब भी उस पर अनिवार्य है कि रामज़ान के सम्मान में रोज़ेदार की तरह खाने–पीने से परहेज़ करे।

क़ज़ा व कफ़्फ़ारा वाजिब होने की सूरतें

रोज़े को तोड़ने वाली चीज़ें दो तरह की हैं। कई वो हैं जिनसे क़ज़ा और कफ़्फ़ारा दोनों लाज़िम होते हैं, और वो चीज़ें ये हैं:

पति–पत्नी का संबंध स्थापित करना, चाहे स्खलित (वीर्य निकलना) हो या न हो दोनों हालतों में रोज़ा टूट जायेगा और कफ़्फ़ारा ज़रूरी होगा। अगर ये काम औरत की रज़ामन्दी से हुआ तो उस पर भी कफ़्फ़ारा लाज़िम होगा और अगर उसकी रज़ामन्दी नहीं थी, पति ने ये काम ज़बरदस्ती से किया तो औरत पर केवल क़ज़ा ज़रूरी होगी, अगर शुरूआत में इसे मजबूर किय गया हो और बाद में उसकी रज़ामन्दी हो गयी हो तब भी उस

पर केवल कज़ा ज़रूरी होगी।

जानबूझ कर ऐसी चीज़ खाना जिसको खाने के तौर पर और दवा इस्तेमाल किया जाता है, जैसे रोटी, चावल, शरबत वग़ैरह या किसी दवा का इस्तेमाल करना।

इसके उल्टे अगर भूले से यह कर दे तो रोज़ा नहीं टूटेगा और कोई ऐसी चीज़ खाये जिसे खाने या दवा के तौर पर नहीं खाया जाता तो रोज़ा टूट जाएगा लेकिन सिर्फ़ क़ज़ा लाज़िम होगी कफ़्फ़ारा लाज़िम नहीं होगा, जैसे कोई कंकड़ी या लोहे का टुकड़ा खा ले।

इन चीज़ों से कफ़्फ़ारा वाजिब होने का ज़िक्र इशारे के साथ या खुले तौर पर हज़रत अबूहुरैरा रज़ि0 की इस हदीस में आया है। कहते हैं कि हम सब आप (स0अ0व0) के पास बैठे हुए थे कि एक बद्दू ख़िदमत में हाज़िर हुआ और कहने लगा कि ऐ अल्लाह के रसूल! मैं तबाह हो गया। आप (स0अ0व0) ने पूछा, क्या हुआ? उसने कहा कि मैंने रोज़े की हालत में पत्नी से संबंध स्थापित कर लिया, आप (स0अ0व0) ने पूछा, क्या आज़ाद करने के लिये तुम्हारे पास ग़ुलाम है? उसने कहा, नहीं; आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया, तो क्या दो महीने लगातार रोज़ा रखते हो?उसने कहा, नहीं; आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया इतना माल है कि साठ ग़रीबों को खिला सकते हो? उसने कहा, नहीं।

(बुख़ारी 1936– मुस्लिम 2595)

इससे पता चला कि संबंध स्थापित कर लेने से क़ज़ा व कफ़्फ़ारा दोनों ज़रूरी होंगे और इस बात की ओर इशारा भी मिला कि चूंकि खाना–पीना भी इसी दर्जे (श्रेणी) में है अतः इसका भी यही आदेश होगा। साथ ही कफ़्फ़ारे का तरीक़ा भी मालूम हुआ कि पहले नम्बर पर ग़ुलाम आज़ाद करना है, न कर सके जैसा कि वर्तमान समय में ग़ुलामी का दौर ख़त्म हो जाने के कारण किसी के लिये भी ये शक्ल सम्भव नहीं, तो दो महीने लगातार रोज़े रखे, अगर इन दो महीनों के बीच रमज़ान आ गया तो या अय्याम तश्रीक () आ गये तो क्रम टूट जायेगा और शुरूआत से रोज़े रखने पड़ेंगे। यही हुक्म उस वक़्त भी होगा जब बीमार हो जाये या औरत निफ़ास (प्रस्व रक्त) की हालत में हो जाये, क्रम उससे भी टूट जायेगा। यद्यपि अगर बीच में औरत को हैज़ (माहवारी) आ जाये तो वो रोज़े रखना बन्द कर दे, फिर जब हैज़ रुक जाये तो जितने रोज़े बाक़ी रह गये थे सिर्फ़ वही रख ले फिर से रखने की ज़रूरत नहीं है।

अगर किसी को खाने पर जान व माल की धमकी देकर मजबूर किया गया, और उसने ख़ौफ़ (भय) से खा लिया तो रोज़ा टूट जायेगा लेकिन सिर्फ़ क़ज़ा ज़रूरी होगी। यही हुक्म उस समय होगा जब ग़लती से कुछ खा–पी ले, यानि रोज़ा याद था, खाने–पीने का इरादा नहीं था लेकिन खाने–पीने की चीज़ हलक़ से उतर गयी, तो ऐसी सूरत में रोज़ा टूट जायेगा और सिर्फ़ क़ज़ा वाजिब होगी।

अगर कोई ऐसी चीज़ खाई या पी जिसको बतौर दवा या ग़िज़ा नहीं खाया–पिया जाता है जैसे कन्करी वग़ैरह।

दांतों में कोई चीज़ अटकी हुई थी, अगर वो चने के बराबर या उससे बड़ी थी तो उसके निगलने से रोज़ा टूट जायेगा और क़ज़ा होगी और अगर चने से छोटी थी तो रोज़ा नहीं टूटेगा लेकिन ये उस वक़्त होगा जब मुंह से न निकाला हो अगर निकाल कर खाये तो चीज़ छोटी हो या बड़ी रोज़ा टूट जायेगा।

अगर हक़्ना (पचना) लगाया या नाक के अन्दरूनी हिस्से में दवा डाली या कान में तेल या कोई दवा डाली या औरत ने अपनी शर्मगाह में दवा डाली तो रोज़ा टूट जायेगा और केवल क़ज़ा ज़रूरी होगी लेकिन अगर आंख में दवा डाली या सुरमा लगाया तो रोज़ा नहीं टूटेगा, इसी तरह अगर कान में पानी डाला तब भी रोज़ा नहीं टूटेगा।

अगर अगरबत्ती या लोबान सुलगाई फिर उसको सूंघा और धुआं अन्दर चला गया तो रोज़ा टूट जायेगा। इसी तरह सिगरेट, बीड़ी इत्यादि से रोज़ा टूट जायेगा।

क़ै (उल्टी) के बारे में लोगों में आम तौर से ये ग़लत फ़हमी पायी जाती है कि चाहे जिस तरह की भी क़ै हो रोज़ा टूट जायेगा, इसलिये क़ै के सिलसिले में आप (स0अ0व0) ने इरशाद फ़रमायाः

जिसको रोज़े की हालत में ख़ुद से क़ै हो जाये उस पर क़ज़ा नहीं है और जो जानबूझ कर क़ै करे उस क़ज़ा ज़रूरी है। (तिरमिज़ी)

इस हदीस के आधार पर फ़ुक़्हा (धार्मिक विद्वानों) ने फ़रमायाः क़ै कि कई सूरतें हो सकती हैं लेकिन रोज़ा केवल दो सूरतों में टूटता है, एक ये कि मुंह भर के हो और रोज़ेदार इसको निगल ले, चाहे पूरी क़ै या चने के बराबर या उससे ज़्यादा को निगले। दूसरे ये कि जानबूझ कर क़ै करे और मुंह भर के क़ै हो, बक़िया किसी और तरह की क़ै से रोज़ा नहीं टूटता है।

पान, तम्बाकू और सिगरेट–बीड़ी का हुक्म

इसी हुक्म में पान तम्बाकू और सिगरेट इत्यादि भी हैं। पान तम्बाकू की पीक अगर कोई निगल लेता है तो बिल्कुल साफ़ बात है कि उसने एक चीज़ हलक़ से नीचे उतार ली। अतः इससे रोज़े के चले जाने में कोई शक की बात ही नहीं है लेकिन कुछ लोग पीक निगलते नहीं है सिर्फ़ पान व तम्बाकू चबाकर उसे थूक देते हैं। इसलिये कुछ लोगों को शक होता है कि उससे शायद रोज़ा नहीं टूटता क्योंकि फ़ुक़्हा किराम ने फ़रमाया है कि किसी चीज़ के चबाने से रोज़ा नहीं टूटता और इस शक्ल में सिर्फ़ चीज़ को चबाया गया खाया नहीं गया लेकिन ये शक ठीक नहीं है इसलिये कि खाने–पीने को रोज़ा तोड़ने वाला बताया गया है और उन चीज़ों के चबाने को भी खाना कहते हैं फिर कुछ पान या उसका पीक तो बहरहाल हलक़ के नीचे उतर जाता है साथ ही इसके आदी लोगों को इसमें ख़ास लज़्ज़त (विशेष मज़ा) मिलती है अतः न केवल यह कि उनसे रोज़ा टूट जायेगा। बल्कि अगर उन चीज़ों को जानबूझ कर इस्तेमाल किया गया तो कफ़्फ़ारा भी लाज़िम होगा।

इसी हुक्म में गुल से दांत मांजना भी है। इसलिये कि इसमें भी ख़ास लज़्ज़त मिलती है और कुछ हिस्सा के अन्दर जाने का बहुत हद तक संभावना रहती है।

जहां तक बीड़ी–सिगरेट इत्यादि का संबंध है तो उसमें जानबूझ कर धुआं अन्दर लिया जाता है और जानबूझ कर धुआं अन्दर लेने से रोज़ा टूट जाता है। अतः इन सारी चीज़ों से परहेज़ ज़रूरी है।

मन्जन और टूथपेस्ट का हुक्म

आप (स0अ0व0) ने मिस्वाक की बड़ी ताकीद फ़रमायी (ज़ोर दिया) है। इस एतबार से फ़ुक़्हा ने रमज़ान में भी मिस्वाक करने की इजाज़त दी है चाहे मिस्वाक की लकड़ी सूखी हो या गीली लेकिन अगर मिस्वाक की तरी उसकी हलक़ के नीचे उतर जाये तो रोज़ा टूट जाता है लिहाज़ा रोज़े की हालत में मिस्वाक करते हुए इसका ख़्याल रखना चाहिये कि मिस्वाक की तरी या लकड़ी का कोई हिस्सा हलक़ से नीचे न उतरने पाये। जहां तक मन्जन व टूथपेस्ट इत्यादि का संबंध है तो उनका हुक्म मिस्वाक के हुक्म से अलग है इसलिये कि इनमें ज़ायक़ा बहुत बढ़ा हुआ होता है। अतः जिस तरह फ़ुक़्हा (धर्मज्ञाताओं) ने फ़रमाया कि किसी ज़रूरत के बग़ैर किसी चीज़ का चबाना मकरूह है। उसी तरह इन सब चीज़ों का भी हुक्म होगा। यद्यपि किसी ख़ास ग़रज़ से अगर उन चीज़ों से दांत साफ़ करे तो इन्शाअल्लाह कराहत नहीं होगी।

आक्सीजन का हुक्म

दमे के मरीज़ को दौरा पड़ने के वक़्त आक्सीजन दी जाती है। रोज़े की हालत में इस तरह आक्सीजन लेने का क्या हुक्म होगा? फ़िक़्ही जुज़ () को सामने रखा जाये तो ख़्याल होता है कि अगर होता है कि अगर आक्सीजन के साथ कोई दवा न हो तो रोज़ा नहीं टूटना चाहिये क्योंकि ये सांस लेना है और सांस लेने के ज़रिये हवा लेने से रोज़ा नहीं टूटता है और न उसे खाने–पीने में गिना जाता है। अगर इसके साथ दवा के कण भी हों तो फिर उससे रोज़ा टूट जायेगा। (जदीद फ़िक़्ही मसले : 188/1)

जहां तक दमे के मरीज़ के लिये इन्हेलर के प्रयोग का संबंध है तो चूंकि इसमें दवा मिली हुई होती है लिहाज़ा इससे रोज़ा टूट जायेगा।

इन्जेक्शन और ड्रिप लगवाना

उलमा की सहमति इसी पर है कि इन्जेक्शन चाहे किसी भी प्रकार का हो उससे रोज़ा नहीं टूटेगा चाहे रग में लगाया जाये या गोश्त में। यही हुक्म ड्रिप लगवाने का भी है, लेकिन बग़ैर किसी ग़रज़ के बेहतर यही है कि दिन में न लगवाये, ज़रूरत हो तो दिन में भी लगवा सकता है, लेकिन सिर्फ़ इस मक़सद से ड्रिप लगवाना कि बदन में ताक़त आ जाये और प्यास में कमी हो जाये मकरूह है।

ज़बान के नीचे दवा रखना

फ़ुक़्हा ने अनावश्यक किसी चीज़ को मुंह में रखने और चखने को मकरूह घोषित दिया है, यद्यपि यह स्पष्ट किया गया है कि अगर किसी कारण से ऐसा करे तो कराहत नहीं होगी। कारण की मिसाल में फ़ुक़्हा ने लिखा है कि शौहर अगर बदअख़लाक (दुर्व्यवहारी) और सख़्त मिज़ाज वाला हो तो उसकी बीवी के लिये नमक इत्यादि का पता लगाने के लिये चखना जायज़ होगा। लेकिन साथ ही ये साफ़ है कि अगर कोई ऐसी चीज़ मुंह में रखी या चबाई जिसका हलक़ के नीचे उतर जाना विश्वस्नीय है तो रोज़ा टूट जायेगा। इसकी मिसाल में फ़ुक़्हा ने कुछ गोंदो का नाम लिया है। शायद इसी वजह से हमारे उलमा ने पान तम्बाकू इत्यादि के मुंह में रखने को रोज़ा तोड़ने वाला बताया है। इसलिये कि इसका असर साफ़ तौर पर हलक़ के नीचे पहुंच जाते हैं और तम्बाकू की तलब पूरी हो जाती है।

इस व्याख्या के बाद हम आसानी से फ़ैसला कर

सकते हैं कि "इन्जाइना" (दिल का रोग) के मरीज़ों के लिये इस ज़रूरत से कहीं बढ़कर है जिसके तहत बीवी को नमक चखने की छूट दी गयी है और सवाल केवल ये रह जाता है कि ये दवा हलक़ के नीचे तो नहीं उतरती? अगर एहतियात के बावजूद दवा के ज़र्रात ख़ास गोंद की तरह हलक़ के नीचे उतर जाते हों तो उसके मुंह में रखने से रोज़ा टूट जायेगा और ज़बान के नीचे रखने के बाद तबियत बेहतर हो जाने से लगता है ज़ाहिरी तौर पर यही बात है। लेकिन विशेषज्ञों की राय है कि ऐसा नहीं है, इसको देखते हुए कहा जा सकता है कि जहां तक हो सके रोज़ेदार इस गोली का इस्तेमाल न करे लेकिन इसके इस्तेमाल से रोज़ा उसी वक़्त टूटेगा जब दवा मिला हुआ लुआब (एक प्रकार का थूक) हलक़ के नीचे उतर जाये। सिर्फ़ जबान के नीचे गोली रखना रोज़ा टूटने की वजह नहीं होगी।

इन्हेलर का इस्तमाल

जिन लोगों को दमे की शिकायत होती है उनको इन्हेलर के ज़रिये दवा का इस्तेमाल करना पड़ता है। इसके ज़रिये पाउडर का बहुत छोटा कण फेफड़ों तक पहुंचाया जाता है। इलाज के इस तरीक़े के ज़रिये दवा के इस्तेमाल से रोज़ा टूट जायेगा। इसलिये फ़िक़ के नज़रिये से साफ़ ज़ाहिर हो रहा है कि मनाफ़िज़–ए–अस्लिया (मुंह, दिमाग, नाक, कान, अगली–पिछली शर्मगाहें) से जब किसी चीज़ को दाख़िल किया जा रहा हो तो केवल दाख़िले से रोज़ा टूट जाता है और इन्हेलर के इस्तेमाल में बहरहाल दख़ल होता है चाहे दवा कम ही क्यों न हो।

भाप की शक्ल में दवा का इस्तेमाल

निमोनिय और कई दूसरी बीमारियों में भाप के ज़रिये भी दवा इस्तेमाल की जाती है। ये इस्तेमाल कभी दवा को पानी में डालकर और पानी को खौलाकर उसकी भाप मुंह और नाक से लेकर किया जाता है और कभी ये काम कुछ यन्त्रों के द्वारा किया जाता है। बहरहाल भाप चाहे किसी भी यन्त्र की मदद से ली जाये या सादा तरीक़े से, दोनों हालतों में रोज़ा टूट जायेगा, इसके लिये फ़ुक़्हा ने साफ़ किया है कि जानबूझ कर धुआं हलक़ के नीचे उतारने से रोज़ा टूट जाता है और ये बात इसमें पूरी तरह से पायी जाती है।

बवासीरी मस्सों पर मरहम लगाने का आदेश

अगर पीछे के रास्ते से किसी दवा का प्रयोग किया जाए और दवा हुक़्ना (पिछली शर्मगाह का भीतरी भाग) लगाने के स्थान तक पहुंच जाए तो रोज़ा टूट जाता है। इसलिए फ़ुकहा ने इसको भी हुक़्ना लगाने के स्थान में सम्मिलित किया हैं जबकि फ़ुकहा ने स्पष्ट किया है कि यदि दवा हुक़्ना लगाने के स्थान तक न पहुंचे तो रोज़ा नहीं टूटेगा।

इस व्याख्या से स्पष्ट हो गया कि कोई दवा या मरहम लगाने से या इसको पानी से तर करके चढ़ाने से रोज़ा नहीं टूटेगा इसलिए कि जानकारों का कहना है कि बवासीरी मस्से हुक़्ना लगाने के स्थान से बहुत नीचे होते हैं।

रोग की पुष्टि के लिए यन्त्रों का प्रयोग

अगर रोग की खोज के लिए पीछे के गुप्तांग में किसी यन्त्र की सहायता ली जाए तो अगर यह यन्त्र सूखे हैं और इनका एक सिरा बाहर है जैसा कि आमतौर पर होता है तो इन यन्त्रों को अन्दर डालने से रोज़ा नहीं टूटेगा लेकिन अगर यन्त्र पर कोई तेल या ग्रीस जैसी चीज़ लगाकर इसे अन्दर किया गया है तो रोज़ा टूट जाएगा।

यही हुक्म औरत की अगली शर्मगाह तहक़ीक़ (खोज) के लिये किसी यन्त्र के डालने का भी है।

गर्भ तक यन्त्र का पहुंचाना

गर्भ की सफ़ाई के लिये और फ़मे रहम को बढ़ाने के लिये जो यन्त्र (क्पसंजवते) प्रयोग किये जाते हैं और गर्भ का अन्दरूनी हिस्सा खुरचने का यन्त्र (ब्नतमजजम) यदि उन पर कोई तेल इत्यादि लगाकर उनको प्रविष्ठ कराया जाये तो रोज़ा टूट जाएगा और अगर सूखा डाला जाए तो रोज़ा नहीं टूटेगा।

लेकिन यदि सूखा डालकर और एक बार बाहर निकालकर दोबारा साफ़ किये बिना उनको फिर डाला जाए तो रोज़ा टूट जाएगा चाहे दोबारा सूखा हो गीला।

औरत की शर्मगाह में दवा कर रखना

यदि आन्तिरक भाग में कोई दवा रखी जाए या रखी ऊपरी हिस्से में जाए वह अन्दरूनी हिस्से तक पहुंच जाए तो रोज़ा टूट जाएगा, चाहे दवा गीली हो या सूखी।

पेशाब के स्थान तक नली का पहुंचना

यदि मर्द के मुसाना तक नली पहुंचाई जाये तो इससे रोज़ा नहीं टूटेगा चाहे नली सूखी हो या गीली इससे दवा पहुंचाई जाए या नहीं और औरत के मुसाना में नली पहुंचाई जाए तो यदि नली गीली है तो या इससे दवा पहुंचाई गई है तो रोज़ा टूट जाएगा लेकिन अगर नली सूखी हो और इससे दवा भी न पहुंचाई गई हो तो रोज़ा नहीं टूटेगा।

एतिकाफ़ के कुछ मसले

एतिकाफ़ अरबी भाषा का एक शब्द है जिसका अर्थ ठहरने और स्वंय को रोक लेने का है। शरीअत के अनुसार मस्जिद के अन्दर नियत के साथ अपने आप को कुछ विशेष चीज़ों से रोके रखने का नाम एतिकाफ़ है। रसूलल्लाह (स0अ0) ने एतिकाफ़ के विशेष लाभ बताए हैं। रसूलुल्लाह (स0अ0) ने कहा है कि एतिकाफ़ की हालत में एतिकाफ़ करने वाला गुनाहों से तो दूर रहता ही है और मस्जिद से बाहर न निकलने की वजह से जिन नेकियों से वंचित रहता है वो नेकियां भी अल्लाह तआला के करम से उसकी नेकियों में शामिल हो जाती हैं। रसूलल्लाह (स0अ0) ने जिस पाबन्दी से एतिकाफ़ किया उम्मुलमोमिनीन हज़रत आयशा रज़ि0 कहती हैं कि आप (स0अ0) वफ़ात (देहान्त) तक बराबर रमज़ानुल मुबारक के आख़िरी दस दिनों में एतिकाफ़ करते रहे। फिर आप (स0अ0) के बाद आप की बीवियों ने भी एतिकाफ़ फ़रमाया। दस दिन का एतिकाफ़ आप (स0अ0) का नियम था। एक साल एतिकाफ़ न कर सके तो दूसरे साल बीस दिन का एतिकाफ़ फ़रमाया।

एतिकाफ़ के प्रकार

फ़ुक़हा (धार्मिक विद्वान) ने आदेश और महत्व के आधार पर एतकाफ़ की तीन क़िस्में बयान की हैं।

1– वजिब

2– मसनून

3– मुसतहब

वाजिब एतिकाफ़

किसी नज़र और मन्नत मांगने की वजह से दूसरी इबादतों की तरह एतिकाफ़ भी वाजिब हो जाता है। एतिकाफ़ कम से कम एक दिन का होगा उससे कम का नही और उसकी नज़र के समय रोज़ा रखने की नियत हो या न की हो, बहरहाल रोज़ा रखना आवश्यक होगा।

मसनून एतिकाफ़

रमज़ानुल मुबारक के आख़िरी दस दिनों में एतिकाफ़ सुन्नते मुअक्कदा अलल किफ़ाया है यानि अगर किसी एक व्यक्ति ने एतिकाफ़ कर लिया तो सभी से सुन्नत को छोड़ने का गुनाह ख़त्म हो जाएगा और अगर किसी ने नहीं किया तो सभी सुन्नत को छोड़ने के गुनहगार होंगे। एतिकाफ़ मसनून के लिए रोज़ा ज़रूरी है।

एतिकाफ़ का तरीक़ा ये है कि बीस रमज़ानुल मुबारक को अस्र के बाद सूरज डूबने से पहले एतिकाफ़ की नियत से मस्जिद में दाख़िल हो जाए और उन्तीस रमज़ानुल मुबारक को ईद का चांद होने के बाद या तीस तारीख़ को सूरज डूबने के बाद वापस आ जाए।

नफ़िल एतिकाफ़

नफ़िल एतकाफ़ में न रोज़ा की शर्त है न मस्जिद में रात गुज़ारने की और न दिनों की कोई संख्या है जितने दिन और जितने क्षणों का चाहे एतिकाफ़ कर सकता है उसका तरीक़ा ये है कि मस्जिद में दाख़िल होते समय एतिकाफ़ की नियत कर ले। इस प्रकार जब तक वो मस्जिद में रहेगा एतिकाफ़ का सवाब मिलता रहेगा और जब बाहर आ जाएगा तो एतिकाफ़ ख़त्म हो जाएगा।

एतिकाफ़ की शर्तें

एतिकाफ़ सही होने के लिए एतिकाफ़ करने वाले का मुसलमान और बालिग़ होना, नियत का होना, मर्द का नापाकी व औरत का माहवारी से पाक होना और ऐसी मस्जिद में एतिकाफ़ करना जिसमें पांच वक्त की नमाज़ अदा की जाती हो शर्त है। बालिग़ होना ज़रूरी नहीं बालिग होने के निकट और समझदार नाबालिग़ भी एतिकाफ़ कर सकते हैं। वाजिब और मसनून एतिकाफ़ के लिए रोज़ा रखना भी ज़रूरी है।

एतिकाफ़ की बेहतर जगह

एतिकाफ़ उन इबादतों में से है जिसकी अदाएगी मस्जिद में होनी चाहिए, कहीं और बैठ जाना काफ़ी नही इसलिए कि यही रसूलल्लाह (स0अ0) का नियम रहा है और हज़रत अली रज़ि0 से रिवायत है कि आप (स0अ0) ने फ़रमाया कि एतिकाफ़ केवल मस्जिद में ही होता है। एतिकाफ़ के लिए मर्दों के हक़ में सबसे बेहतर मस्जिद–ए–हराम फिर मस्जिद–ए–नबवी फिर मस्जिद–ए–अक़सा और फिर शहर की जामा मस्जिद जहां नमाज़ी अधिक आते हों और फिर अपने मोहल्ले की मस्जिद।

औरतों के लिए एतिकाफ़ करना सुन्नत है लेकिन ये ज़रूरी है कि शौहर से आज्ञा ले ले। औरत के लिए मस्जिद में एतिकाफ़ करना मकरूह है। उनको घर में एतिकाफ़ करना चाहिए। अगर घर में पहले से कोई

जगह एतिकाफ़ के लिए तय है तो वहीं एतिकाफ़ करे ये इमाम अबू हनीफ़ा रह0 की राय है क्योंकि इस दौर में औरतों का मस्जिद में एतिकाफ़ करना फ़ितने से ख़ाली नही इसलिए रसूलल्लाह (स0अ0) ने औरतों के मस्जिद में नमाज़ अदा करने के मुकाबले में घर में नमाज़ अदा करने को बेहतर क़रार दिया है।

एतिकाफ़ करने वाले को चाहिए कि अपना समय कुरआन पाक की तिलावत, रसूलल्लाह (स0अ0) की सीरत (चरित्र), अम्बिया व बुज़ुर्गों के वाक़्यों व हालातों और दीनी किताबों का अध्ययन और उन्ही चीज़ों को पढ़ाना, दीनी किताबों को लिखना या उनको एकत्रित करने इत्यादि में अपना समय लगाएं। एतिकाफ़ की हालत में खुशबू वग़ैरह लगा सकते हैं। एतिकाफ़ के आदाब में ये भी है कि मस्जिद के आदाब का लिहाज़ रखा जाए। मस्जिद में सामान लाकर ख़रीदा–बेचा न जाए हाँ अगर सौदा बाहर हो तो इस तरह के मामले की गुंजाइश है। इबादत समझ कर बिल्कुल ख़ामोश रहना या बेहूदा और नामुनासिब बातें करना भी मकरूह है।

एतिकाफ़ को तोड़ने वाली चीज़ें

बीवी से हमबिस्तरी, मस्जिद के अन्दर हो या बाहर, जानबूझ कर हो या भूल से, दिन में हो या रात में, वीर्य निकले या न निकले, हर हाल में एतिकाफ़ टूट जाएगा। हमबिस्तरी से पहले के मामले यानि छूना या चूमना इत्यादि भी जाएज़ नही मगर उससे एतिकाफ़ नही टूटेगा बल्कि बीवी से बातचीत करना सही है।

इसी प्रकार ऐसी बेहोशी जो एक दिन से अधिक हो गयी हो तो एतिकाफ़ टूट जाता है औरत को मासिक धर्म आ गया तो उससे भी एतिकाफ़ टूट जाएगा और उसकी क़ज़ा वाजिब होगी।

दिन में जानबूझ कर खा पी लेने से रोज़ा ख़राब हो जाता है और एतिकाफ़ भी टूट जाता है।

मस्जिद से बाहर निकलना

बिना आवश्यकता मस्जिद से बाहर निकल जाने से भी एतिकाफ़ टूट जाता है। इमाम अबू हनीफ़ा रह0 के नज़दीक तो बिना आवश्यकता थोड़ी देर के लिए निकलने से भी एतिकाफ़ ख़राब हो जाता है। लेकिन साहिबैन रह0 के निकट दिन रात के अधिकतर भाग में मस्जिद से बाहर रहने से एतिकाफ़ ख़राब हो जाता है। अल्बत्ता किसी ज़रूरत के लिए बाहर निकला जा सकता है। ये आवश्यकता दो प्रकार की है।

1– स्वाभाविक 2– शरई

स्वाभाविक आवश्यकता से मुराद पेशाब पाखाना ग़ुस्ल (स्नान) वाजिब (अनिवार्य) हो जाने की स्थिति में ग़ुस्ल (स्नान) के लिए निकलना।

खाना लाने वाले न हों तो खाने के लिए निकलना इत्यादि शामिल है।

मगर इन सूरतों में भी आवश्यकता से अधिक नहीं ठहरना चाहिए।

इन्ही शरई कामों में उलमा ने हुक़्क़ा को शुमार किया है कि मस्जिद से बाहर जाकर हुक़्क़ा पीकर बदबू मिटाकर मस्जिद में आ जाना चाहिए। यही तरीक़ा उन लोगों को भी अपनाना चाहिए जो सिगरेट पान वग़ैरह के आदी हों।

शरई आवश्यकताओं में से ये भी है कि अगर ऐसी मस्जिद में एतिकाफ़ कर रहा है जहां जुमा नही होता है तो जुमा के लिए जामा मस्जिद जाना सही है। बल्कि इसकी रिआयत जरूरी है कि केवल इतनी देर दूसरी मस्जिद में ठहरे कि तहीयतुल मस्जिद पढ़ ले। सुन्नत अदा कर ले फिर खुत्बे से जुमा के बाद की सुन्नतें अदा करने के बाद जल्द से जल्द अपनी मस्जिद में आ जाए देरी मकरूह है।

अगर कोई शख़्स जबरन निकाल दे या मस्जिद टूट जाए जिसकी वजह से निकलना पड़े या उस मस्जिद में जान व माल का ख़तरा हो जाए तो उन सभी हालतों में उस मस्जिद के बजाए दूसरी मस्जिद में जाकर एतिकाफ़ कर लेना सही है और उससे एतिकाफ़ में कोई ख़लल नही पड़ेगा लेकिन दूसरी मस्जिद में फ़ौरन बिना देर किये चला जाए इसी प्रकार अगर एतिकाफ़ के बीच मस्जिद से निकल कर अज़ान देने के लिए मीनार पर चढ़ जाए तो इसकी भी इजाज़त है।

एतिकाफ़ की क़ज़ा

अगर एतिकाफ़ वाजिब (अनिवार्य) था और किसी वजह टूट गया तो उसकी क़ज़ा ज़रूरी है। इमाम अबू हनीफ़ा रह0 के नज़दीक मसनून (सुन्नत) एतिकाफ़ में केवल उस दिन की क़ज़ा करनी होगी जिस दिन का एतिकाफ़ टूट गया जबकि इमाम अबू यूसुफ़ रह0 के निकट पूरे दस दिन की क़ज़ा वाजिब होगी। मशहूर फ़क़ीह अल्लामा हाफ़िज़ इब्ने हुमाम रह0 का रुझान भी इसी तरफ मालूम होता है इसलिए यही अधिक अच्छा तरीक़ा है कि पूरे अशरे की क़ज़ा की जाए।

ज़कात – कुछ ज़रूरी हुक्म व मसले

ज़कात इस्लाम का एक ज़रूरी हिस्सा है। कुरआन पाक में जगह–जगह नमाज़ के साथ ज़कात देने पर भी ज़ोर दिया गया है। "आप स0अ0 ने इसे इस्लाम के पांच बुनियादी हिस्सों में से एक बताया है।"

एक हदीस में ये भी इरशाद फ़रमायाः "मुझे हुक्म दिया गया कि लोगों से क़िताल करूं ताकि वो कलिमा शहादत अदा करें, और ज़कात दें।" (बुख़ारीः 1399)

सहबे निसाब होने के बावजूद ज़कात न अदा करने वालों को कुरआन पाक में जो सख़्त तरीन वईद सुनाई गयी है उससे रोंगटे खड़े हो जाते हैं। अल्लाह तआला का इरशाद हैः "जो लोग अपने पास सोना–चांदी जमा करते हैं और उसको अल्लाह के रास्ते में ख़र्च नहीं करते तो (ऐ नबी स0अ0) आप उनको दर्दनाक अज़ाब की ख़ुश ख़बरी सुना दीजिये, ये दर्दनाक अज़ाब उस दिन होगा जिस दिन उस सोने और चांदी को जहन्नम की आग में तपाया जायेगा, फिर उसके ज़रिये उनकी पेशानी, उनके पहलू और उनकी पीठ को दाग़ा जायेगा (और उनसे कहा जायेगा) ये है वो ख़ज़ाना जो तुमने अपने लिये जमा किया था, तो आज तुम उस ख़ज़ाने का मज़ा चखो जो तुम अपने लिये जमा कर रहे थे।"

लिहाज़ा हर साहबे निसाब मुसलमान के लिये ज़रूरी है कि वो पूरा–पूरा हिसाब करके ज़कात की अदायगी करे। बहुत से लोग बिना हिसाब के ही कुछ रक़म या दूसरी चीज़ें ग़रीबों को देकर अपने को ज़िम्मेदारी से बरी समझते हैं, ये तरीक़ा सही नहीं है, पूरा हिसाब लगाकर ज़कात देना ज़रूरी है।

सदक़े से माल बढ़ता है

ज़कात अदा करने में एक बड़ा बल्कि बुनियादी कारण ये माना जाता है कि इससे माल की एक बड़ी मात्रा हाथ से निकल जायेगी और उसके बदले में कोई चीज़ नहीं मिलेगी। लेकिन कुरआन मजीद में इस ख़्याल की काट की गयी है और इसका पूरा इत्मिनान दिलाया गया है कि अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने से घटता नहीं है, बल्कि इसमें बढ़ोत्तरी होती है।

एक दूसरी जगह माल ख़र्च करने से जो बेपनाह बरकत व इज़ाफ़ा होता है उसको कुरआन में एक मिसाल देकर समझाया गया है। अल्लाह तआला का इरशाद हैः "अल्लाह के रास्ते में ख़र्च करने वाले की मिसाल उस बीज की तरह है जिसको जब ज़मीन में डाला जाता है तो ज़ाहिरी आंख ख़ाक में मिलकर ज़ाया होते उसे देखती है, लेकिन फिर होता क्या है? अल्लाह तआला उस दाने से पौधा निकालता है, जिसमें सात बालियां निकलती हैं, और हर बाली में सौ दाने होते हैं, इसी तरह हर दाने से सौ दाने हासिल होते हैं।" (सूरह बक़रह : 261)

यही मामला अल्ला की राह में ख़र्च करने वालों के साथ होता है कि ज़ाहिरी तौर पर लगता है कि अपना माल ख़राब कर दिया लेकिन अल्लाह तआला दुनिया में भी उस पर बरकतों के दरवाज़े खोल देते हैं, और आख़िरत में भी इंशाअल्लाह उसको कई गुना अज्र व सवाब मिलेगा।

ज़कात वाजिब होने की शर्तें

ये भी ध्यान रहे कि ज़कात न हर व्यक्ति पर फ़र्ज़ होती है न हर माल पर, बल्कि इसके वाजिब होने के लिये उस व्यक्ति का अक़्ल वाला होना और बालिग़ होना, साहबे निसाब होना, माल पर साल गुज़रना, उस माल का कर्ज़ से ख़ाली होना, इसी तरह उसका हाजते अस्लिया से ख़ाली होना शर्त है, एक भी शर्त न पायी जाये तो ज़कात फ़र्ज़ नहीं होगी।

अमवाले ज़कात

जिन चीज़ों पर ज़कात वाजिब है वो बुनियादी तौर पर चार हैं।

1. जानवर 2. सोना 4. व्यापारिक माल
3. चांदी (नक़दी भी सोना और चांदी के हुक्म में आती है)

सोने–चांदी का निसाब

चांदी का निसाब दो सौ दिरहम जबकि सोने का निसाब बीस मिसक़ाल है। हिन्दुस्तान के उलमा की तहक़ीक़ चांदी के दो सौ दिरहम यानि साढ़े बावन तोला (612.360 ग्राम) और सोने के बीस मिसक़ाल यानि साढ़े सात तोला (87.480 ग्राम) के बराबर होते हैं। जहां तक नक़दी और व्यापारिक माल का संबंध है तो उनकी मिल्कियत का अन्दाज़ा भी चांदी के निसाब से किया जायेगा यानि अगर किसी के पास चांदी के निसाब के बराबर नक़द रक़म या व्यापारिक माल है तो वो शरीअत के अनुसार साहबे निसाब है।

फिर ये भी ध्यान रहे कि सोना–चांदी चाहे इस्तेमाल हो रहे ज़ेवर की शक्ल में हो या ग़ैर इस्तेमाली ज़ेवर की शक्ल में हो, चाहे सिक्कों या जुरूफ़ वग़ैरह की शक्ल में हो अगर वो निसाब के बराबर है और उस पर साल गुज़र जाता है तो उसकी ज़कात बहरहाल वाजिब हो जायेगी। यही हुक्म नक़द रक़म का भी है, लेकिन बक़िया दूसरे माल यानि उरूज़ में ये भी शर्त है कि वो व्यापार की नियत से हों, वरना उन पर ज़कात वाजिब नहीं होगी।

हौलान–ए–हौल का मतलब

किसी के निसाब के बराबर ज़कात का माल है तो अगर साल के बीच में उस माल में इज़ाफ़ा होता है तो उस ज़ायद माल का हिसाब पहले से मौजूद माल की तारीख़ से किया जायेगा, जब बक़िया माल पर साल गुज़र जाये तो उसकी ज़कात के साथ उस ज़ायद माल की भी ज़कात निकालना ज़रूरी होगा ये नहीं कि हर बढ़ोत्तरी के लिये अलग से साल का हिसाब किया जाये और ये कि साल गुज़रने में अंग्रेज़ी महीनों के बजाये चांद के महीनों का हिसाब किया जायेगा।

किस दिन की मालियत का एतबार होगा

व्यापारिक माल के बारे में गुज़र चुका है कि उन पर ज़कात फ़र्ज़ है। जैसे अगर किसी की दुकान या कोई कारोबार है तो साल गुज़रने के बाद उसके पास जो कुछ नक़दी या सामान है उसकी ज़कात उस पर फ़र्ज़ है और सामान की मिल्कियत लगाते वक़्त उनकी उस दिन की मालियत का एतबार होगा जिस दिन वो उनकी ज़कात अदा कर रहा है।

हाजत–ए–अस्लिया (ज़रुरी ज़रुरतें) का मतलब

जो चीज़ अस्ल ज़रूरतों के लिये हो उसमें ज़कात फ़र्ज़ नहीं होती, अस्ल ज़रूरत की मिसाल में फ़ुक़्हा ने रहने के मकान, पहनने के कपड़े, सवारी के जानवर और गाड़ी, खेती या फ़ैक्ट्री के यन्त्र, और घर के फ़र्नीचर इत्यादि का ज़िक्र किया है।

ज़कात की मात्रा

ज़कात की वाजिब मात्रा किसी भी माल में उसका चालीसवा हिस्सा या ढ़ाई प्रतिशत तय की गयी है।

शेयर पर ज़कात

ज़कात हर प्रकार के व्यापारिक माल पर वाजिब है चाहे वो जानवरों का व्यापार हो या गाड़ियों का व्यापार हो या ज़मीन का और क्योंकि शेयर भी व्यापारिक माल में दाख़िल हैं लिहाज़ा उन पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। अगर किसी ने शेयर इ समक़सद से ख़रीदे हैं कि उन पर सालाना नफ़ा हासिल करेगा। उनको बेचेगा नही तो उसको अपनी कम्पनी से ख़बर करनी चाहिये कि उसका कितना सामान अचल है जैसे बिल्डिंग और मशीनरी इत्यादि की शक्ल और कितना माल चल है जैसे नक़द कच्चा माल तैयार माल इत्यादि। जितनी सम्पत्ति अचल है उन पर ज़कात नहीं होगी। और जितनी सम्पत्ति चल है उन पर ज़कात वाजिब होगी। अगर कम्पनी के माल की तफ़्सील न मिल सके तो इस हालत में एहतियात के तौर पर पूरी ज़कात अदा कर दी जाये। और अगर शेयर इ समक़सद से ख़रीदे हैं कि जब बाज़ार में उनकी क़ीमत बढ़ जायेगी तो उनको ख़रीद करके लाभ कमायेगें तो पूरे शेयर की पूरी बाज़ारी क़ीमत पर ज़कात वाजिब होगी। जैसे आपने पचास रूप्ये के हिसाब से शेयर ख़रीदे और मक़सद ये था कि जब उनकी कीमत बढ़ जायेगी तो उनको बेचकर नफ़ा कमायेंगे। उसके बाद जिस दिन आपने ज़कात का हिसाब निकाला उस दिन शेयर की क़ीमत साठ रूप्ये हो गयी तो अब साठ रूप्ये के हिसाब से उन शेयर की मालियत निकाली जायेगी और उस पर ढ़ाई प्रतिशत के हिसाब से ज़कात अदा करनी होगी।

प्राविडेन्ड फ़न्ड पर ज़कात

ज़कात फ़र्ज़ होने की एक अहम शक्ल ये भी है कि उस पर इन्सान का मुकम्मल क़ब्ज़ा भी हो। इसी वजह

से फ़ुक़्हा ने फ़रमाया है कि अगर किसी को कर्ज़ दिया और बाद में क़र्ज़ लेने वाला उससे इनकार कर रहा है बज़ाहिर उसका मिलना दुश्वार है या किसी जगह डालकर भूल गया या किसी दरिया इत्यादि में गिर गया तो उन रूप्यों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। फिर जब ग़ैर मुत्वक़्क़े तौर पर ये माल मिल जाये तो गुज़रे हुए सालों की ज़कात उस पर वाजिब नहीं होगी। ये रक़म जिस वक़्त मिली है उस वक़्त से उसका हिसाब लगाया जायेगा। (हिन्दिया 1/187)

जहां तक प्राविडेन्ड फ़न्ड का संबंध है तो इसमें एक हिस्सा वो होता है जो शासनउसमें मिलाकर देता है। जहां तक इस दूसरी इज़ाफ़ी रक़म का संबंध है तो चाहे उसे ईनाम कहा जाये या मुलाज़िम की उजरत जिसका अभी मालिक नहीं हुआ है, लिहाज़ा उस पर गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब होने की कोई वजह नहीं है। काबिले बहस फ़न्ड का वो हिस्सा है जो मुलाज़िमत के दौरान तन्ख़्वाह से कटकर जमा होता है इसका मामला ये है कि मुलाज़िमीन को इसकी मिलिक्यत है लेकिन उस पर क़ब्ज़ा नहीं हासिल है लिहाज़ा इस रक़म पर भी गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। उल्माए मुहक़्क़ीन का रूझान इसी तरफ़ है।

क़र्ज़ का मिन्हा करना

अगर कोई शख़्स निसाब का मालिक है लेनिक वो साथ ही कर्ज़दार भी है तो कर्ज़ के बराबर माल पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। अगर क़र्ज़ के बराबर मिन्हा करने के बाद भी निसाब के बराबर माल बच रहा है तो उस पर उसी के बराबर ज़कात वाजिब हो जायेगी।

सोने और चांदी को मिलाना

किसी के पास साढ़े सात तोला (612.480 ग्राम) सोना न हो लेकिन उसके पास कुछ सोना और कुछ चांदी मौजूद हो तो क्या उसके ऊपर ज़कात वाजिब हो जायेगी। इस मसले में दो राय हैं।

1– इमाम शाफ़ई और कई दूसरे हज़रात के नज़दीक उस पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। इमाम शाफ़ई ने अपनी किताब अलउम में इस पर बहसकी है कि उसके पास न सोने का निसाब है न चांदी का तो उस पर ज़कात कैसे वाजिब हो सकती है जबकि दोनो अलग–अलग जिंस हैं।

2– दूसरी राय हनफ़ी और कई दूसरे लोगों की है कि अगर दोनों के मिलाने से निसाब पूरा हो जाये तो ज़कात वाजिब हो जायेगी। इस पर बहस बुकैर इब्ने अब्दुल्लाह रज़ि0 के असर से कि ज़कात निकालने में सहाबा का तरीक़ा चांदी और सोने के मिलाने का था। फिर दोनों क़ीमत के एतबार से एक ही जिंस हैं। बहरहाल अक़्ली दलील दोनों तरफ़ से मज़बूत हैं लेकिन नक़ली दलील में इस एतबार से फ़रीक़ अव्वल का मोकिफ़ कुछ मज़बूत क़रार दिया जाता है कि हज़रत बुकैर की रिवायत हदीस की किताब में नहीं मिलती। फिर इमाम अबू हनीफ़ा और साहिबैन की दरमियान ये इख़्तिलाफ़ है कि सोने और चांदी को मिलाने की कैफ़ियत क्या होगी।

इमाम अबू हनीफ़ा के नज़दीक दोनों को क़ीमत के एतबार से मिलाया जायेगा। यानि अगर किसी के पास दो तोला सोना और दो तोला चांदी है तो ये देखा जायेगा कि दो तोला सोना अगर बेच दिया जाये तो क्या साढ़े बावन तोला या उससे ज़्यादा चांदी हासिल हो जायेगी। अगर इतनी ज़्यादा चांदी हासिल हो सकती है तो वो साहिबे निसाब माना जायेगा। फ़तवा इमाम साहब के क़ौल ही पर है। जब कि साहिबैन के नज़दीक दोनों को जुज़ के एतबार से मिलाया जायेगा यानि वज़न के एतबार से अगर आधा निसाब सोने का और आधा चांदी या दो तिहाई साने का और एक तिहाई चांदी का या एक चौथाई सोने का और तीन चौथाई चांदी का पाया जा रहा हो तो ज़कात वाजिब हो जायेगी वरना नहीं।

इमाम साहब के मुफ़ता बिही क़ौल के मुताबिक़ अगर सोने चांदी की मामूली मिक़दार भी किसी के पास हो तो वो साहिबे निसाब बन जायेगा और उसके लिये ज़कात लेना जायज़ नहीं रहेगा। इतनी मामूली मिक़दार बिल्कुल मामूली लोगों के पास भी आम तौर से रहती है। इस तनाज़ुर में ये सवाल उठाया जाता है कि क्या मौजूदा हालात में साहिबैन के कौल को अख़्तियार किया जा सकता है। इसलिये कि साहिबैन का क़ौल अख़्तियार कर लिया जाये तो इसमे ज़कात देने वाले और लेने वाले दोनों का ख़्याल हो जायेगा और तवाज़ुन क़ायम रहेगा।

राक़िम के ख़्याल से ऐसा करने की गुंजाइश है। इसलिये कि इस मसले का संबंध हालात के बदलने से

है और इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि हालात बदल जाये तो हुक्म बदल जाता है। फिर ये तो इफ़्ता के हुक्म में भी लिखा हुआ है कि इख़्तिलाफ़ अगर साहिबैन और इमाम साहिब के बीच में तो मुफ़्ती उनमें से किसी पर भी फ़तवा दे सकता है। लिहाज़ा इज्तिमाई इज्तिहाद के इस दौर में उलमा का इत्तिफ़ाक़ हो जाये तो इसकी गुंजाहश होगी। फिर इमाम साहब की एक रिवायत साहिबैन के क़ौल के मुताबिक़ भी है लिहाज़ा इमाम साहब के इस क़ौल को इस्तहबाब पर महमूल करके ततबीक़ की जा सकती है। मुफ़्ती किफ़ायत उल्ला साहब ने किफ़ायतुल मुफ़्ती में इसी तरह ततबीक़ दी है।

बात का ख़ुलासा ये है कि व्यापारिक माल वाले मसले में मुफ़्ता बिही हुक्म से हटने की इजाज़त नहीं दी जा कसती जबकि दूसरे मसले में अगर उलमा इत्तिफ़ाक़ कर लें तो इसकी गुंजाइश है।

ज़कात के मुस्तहिक़

ज़कात की हैसियत चूंकि केवल आम इन्फ़ाक़ और इन्सानी मदद की नहीं है बल्कि ये एक अहम इस्लामी इबादत और शरई फ़रीज़ा है, इसलिये शरीअत ने इसके ख़र्च निश्चित कर दिये हैं, अल्लाह तआला का इरशाद है: "ज़कात फ़क़ीरों, ग़रीबों, आमलीन (ज़कात की जमा व तक़सीम के कार्यकर्ता) मुअलफ़तुल कुलूब, गुलाम, क़र्ज़दार, अल्लाह के रास्तें में (जिहाद करने वाले) और मुसाफ़िरों के लिये, ये अल्लाह की तरफ़ से मुक़र्रर हुआ काम है और अल्लाह बड़ा इल्म वाला और हिकमत वाला है।"

ज़कात के मसारिफ़ कुरआन मजीद की ऊपर जिक्र की हुई आयत में तफ़सील से बयान किये गये हैं। इसके संबंध में बात ये है कि ज़कात सिर्फ़ उन्हीं लोगों को दी जासकती है जो फ़क़ीर या मिस्कीन हों। यानि जिनके पास या तो माल ही न हो या अगर हो तो निसाब तक न पहुंचता हो। यहां तक कि अगर उनकी मिल्कियत में ज़रूरत से ज़्यादा ऐसा सामान मौजूद है जो साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत तक पहुंच जाता है तो वो ज़कात के मुस्तहिक़ नहीं है। ज़कात का मुस्तहिक़ वो है जिसके पास साढ़े बावन तोला चांदी की मिल्कियत की रक़म या उतनी मालियत का कोई सामान ज़रूरत से ज़्यादा न हो। इसमें भी शरीअत का हुक्म ये है कि मुस्तहिक़ को मालिक बना दिया जाये और वो जिस तरह चाहे उसे खर्च करे। इसीलिये बिल्डिंग की तामीर में ज़कात नहीं लग सकती, न ही किसी इदारे के कर्मचारी की पगार में लग सकती है। इसी तरह कफ़न दफ़न में ज़कात का पैसा लगाना ठीक नहीं है। ज़कात अदा करने वाले को चाहिये कि अच्छी तरह तहक़ीक़ करके सही मसरफ़ में लगाने की कोशिश करे। अफ़ज़ल ये है कि सबसे पहले अपने अज़ीज़ व अक़ारिब में मिस्कीन की तलाश करे। रिश्ते दारों में ज़कात अदा करने से डबल सवाब मिलता है। एक ज़कात अदा करने का दूसरे सिला रहमी करने का।

मुस्तहिक़ होने के साथ साथ एक ज़रूरी शर्त ये है कि मुस्तहिक़ मुसलमान हो। इसीलिये ग़ैर मुस्लिम मुस्तिहिक़ को ज़कात की रक़म देना ठीक नहीं है। आप स0अ0 ने फ़रमाया कि ज़कात मुसलमान मालदारों से ली जायेगी और ग़रीब मुसलमानों पर ख़र्च की जायेगी। (बुख़ारी 1496)

ज़कात निम्नलिखित लोगों को दी जा सकती है:

1– फ़क़ीर (जिनके पास निसाब के बराबर माल न हो)

2– मिस्कीन (जो किसी भी माल के मालिक न हो)

3– इस्लामी हुकूमत के वो कारिन्दे जो ज़कात व उश्र की वसूली पर मुक़र्रर होते हैं।

4– ऐसे गुलाम जो अपनी आज़ादी के लिये मदद के तलबगार हों।

5– ऐसे कर्ज़दार जिनके क़र्ज़ से सबक़दोशी के लिये ज़कात दी जाये जबकि उनके पास अपनी ज़ाति मालियत ज़कात की अदायगी के लिये बाक़ी न हो।

6– वो मुसाफ़िर जो सफ़र के दौरान ज़रूरत मन्द हो जायें।

किन लोगों को ज़कात देना जायज़ नहीं:

1– बाप, दादा, परदादा, नाना, परनाना, इत्यादि। इसी तरह दादी, नानी इत्यादि।

2– लड़के, लड़कियां, पोते, नवासे, पोतियां, नवासियां इत्यादि। 3– बीवी और शौहर।

4– गुलाम बांदी। 5– साहबे निसाब, मालदार।

6– मालदार छोटा बच्चा।

7– सादात (बनू हाशिम, आले अली, आले अब्बास इत्यादि)

मदरसों में ज़कात देने का दोहरा सवाब

मदरसों में ज़कात ख़र्च करने में दोहरा सवाब मिलेगा, एक ज़कात का दूसरे इल्म को फैलाने और दीन की हिफ़ाज़त का।

रमज़ान में ज़कात अदा करने का सवाब

रमज़ानुल मुबारक में चूंकि हर फ़र्ज़ इबादत का सवाब सत्तर गुना बढ़ जाता है इसलिये रमज़ान में ज़कात देने में इन्शाअल्लाह सत्तर गुना सवाब की उम्मीद है। (लेकिन इसका मतलब ये नहीं कि सारी ज़कात रमज़ान में ही निकाल दी जाये और ग़ैर रमज़ान में फ़क़ीरों की ज़रूरतों का ख़्याल न रखा जाये, बल्कि ज़रूरत व मस्लिहत के एतबार से ख़र्च करने का एहतिमाम करना चाहिये)

एक फ़क़ीर को एक वक़्त में मुकम्मल निसाब का मालिक बनाना मकरूह है

एक फ़क़ीर को एकसाथ इतना माल देना कि वो साहबे निसाब हो जाये बेहतर नहीं है, अलबत्ता अगर वो क़र्ज़दार हो और कर्ज़ की अदायगी के लिये बड़ी रक़म दी तो हर्ज नहीं।

ज़रुरी तम्बीहः कुछ मालदार इस मसले से ग़लत फ़ायदा उठाते हैं, वो इस तरह कि कारोबार या हुकूमत का क़र्ज़ इतना ज़्यादा हो जाता है कि उनके अस्ल सरमाये से बढ़ जाता है तो वो लोगों के पास जाकर ये कहते हैं कि हम क़र्ज़दार होने की वजह से ज़कात के मुस्तहिक़ हो गये। इसलिये ज़कात के माल से हमें क़र्ज़ अदा करने में सहयोग दिया जाये।

इस तरह वो लाखों रूपये का मुतालबा रखते हैं तो ऐसे लोगों को चाहिये कि वो पहले अपनी ज़ाति मालियत जायदाद और गाड़ियां वग़ैरह बेच करके अपना कर्ज़ अदा करें, और इसके बाद भी क़र्ज़ अदा न हो तो अब सहयोग की मांग करें, इससे पहले उनका अपने को ज़कात का मुस्तहक़ कहना ग़रीबों का हक़ मारना है।

यतीम को ज़कात देना

अगर यतीम फ़क़ीर समझदार बच्चे को ज़कात दी यो कपड़े पहनाये तो ज़कात अदा हो जायेगी।

नासमझ बच्चे को ज़कात देना

नासमझ छोटे बच्चे की तरफ़ से उसके बाप या वसी या मुरब्बी ने क़ब्ज़ा कर लिया तो ज़कात अदा हो जायेगी वरना नहीं।

हाशमी को ज़कात देना जायज़ नहीं

हाशमी ख़ानदान और उनके आज़ाद किये हुए गुलामों को ज़कात नहीं दी जायेगी।

उसूल व फुरुअ को ज़कात देना

- अपने बाप, दादों, लड़कों और पोतों को ज़कात देने से फ़र्ज़ अदा न होगा।
- बीवी शौहर को और शौहर बीवी को ज़कात नहीं दे सकता
- बीवी शौहर को ज़कात नहीं दे सकती और शौहर बीवी को ज़कात नहीं दे सकता।
- क़र्ज़दार के क़र्ज़ को माफ़ करने से ज़कात अदा न होगी
- क़र्ज़दार को क़र्ज़ से बरी करने से ज़कात अदा न होगी अलबत्ता अगर फ़क़ीर ने मक़रूज़ को ज़कात की रक़म दी फिर उससे अपना कर्ज़ वसूल कर लिया तो ये दुरूस्त है।
- फ़क़ीर समझकर ज़कात दी और बाद में पता चला कि वो मालदार है
- अगर किसी शख़्स ने अपनी ज़कात किसी शख़्स को फ़क़ीर समझकर दी, बाद में पता करने से मालूम हुआ कि वो लेने वाला शख़्स ज़कात का मुस्तहक़ न था तो देने वाले की ज़कात अदा हो गयी।

क़रीबी रिश्तेदारों का हक़

क़रीबी रिश्तेदार ज़कात के अहम मुस्तहिक़ीन में से हैं, उनको ज़कात देने में दो गुना सवाब मिलता है, एक ज़कात का, दूसरे सिलारहमी और क़राबत का। ध्यान रहे कि बाप, दादा, औलाद और पति–पत्नी के अलावा बक़िया सभी ज़रूरतमन्द रिश्तेदारों जैसे भाई, बहन, चचा, फुफी, मामू और भांजे इत्यादि को ज़कात देना शरीअत के हिसाब से सही है, बल्कि अफ़ज़ल है।

ज़कात को एक शहर से दूसरे शहर भेजना

बेहतर है कि हर शहर वाले अपनी ज़कात अपने शहर के फ़क़ीरों और ग़रीबों पर ख़र्च करें लेकिन अगर दूसरी जगह के लोग ज़्यादा मुस्तहिक़ हो तो दूसरी जगह ज़कात की रक़म भेजने में भी कोई हर्ज नहीं है। जैसे बहुत से रिश्तेदार ज़रूरतमन्द दूसरे शहर में रहते हों, या बहुत से मदरसे ऐसे पिछड़े इलाक़ों में हैं जहां सहयोग करना दीन के बचाव के लिये ज़रूरी है तो वहां ज़कात की रक़म भेजना न केवल जायज़ बल्कि ज़्यादा सवाब वाला भी है।

Socialism
समाजवाद

सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

Socialism: A set of political and economic theories based on the belief that everyone has an equal right to a share of a country's wealth and that the government should own and control the main industries. (Oxford Dictionary)

आक्सफ़ोर्ड डिक्शनरी के अनुसार समाजवाद, राजनीतिक तथा आर्थिक विचारों का संग्रह है, इस विश्वास के साथ कि हर व्यक्ति का देश के संसाधनों पर समान अधिकार है तथा सरकार महत्वपूर्ण उधोगों को अपने क़ब्ज़े में रखने की अधिकारी है।

समाजवाद एक ऐसी अर्थव्यवस्था है जिसमें साधनों का उत्पादन (Production) उसका वितरण (Distribution) तथा संसाधनों का आदान–प्रदान (Exchange of Resources) के विभिन्न तत्वों में समाज का हर व्यक्ति बराबर का हिस्सेदार होता है। मालिकाना हक़ का ऐसा रूप धर्मनिरपेक्ष शासन व्यवस्था के द्वारा संभव होता है।

समाजवाद में हर व्यक्ति अपनी क्षमता के अनुसार सेवा प्रदान करता है तथा अपना हिस्सा वसूल करता है। इस कारणवश समाजवादी व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति मेहनत में कोई कसर नहीं छोड़ता है।

ध्यान रहे कि समाजवाद में समाज का हक़ राष्ट्र की उन्नति के बाद आता है, यानि वह कार्य जो राष्ट्र के विकास के लिए आवश्यक होते हैं जैसे परिवहन, शिक्षा, रक्षा इत्यादि, उनका हिस्सा पहले निकाल लिया जाता है, फिर बंटवारे का कार्य किया जाता है।

समाजवाद का आरंभ 1789ई0 की फ़्रांस की क्रान्ति तथा उसके कारणवश होने वाले परिवर्तनों के कारण हुआ। इसके बाद इसकी चर्चा सबसे पहले 1827ई0 में कोआपरेटिव मैग्ज़ीन में तथा फिर 1832ई0 में लेग्लोब मैग्ज़ीन में देखी गयी। उस समय इसका अर्थ "एक आशान्वित सामाजिक राजनीतिक परिवर्तित व्यवस्था" था। कार्ल मार्क्स (Karl Marx) ने अपने घोषणापत्र में कुछ संक्षिप्त विवरण के साथ 1847ई0 में इसको शामिल किया था। यह 1848ई0 की क्रान्ति से ठीक पहले का समय था जिसने पूरे यूरोप में समाजवाद को परिचित कराया।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में यूरोप मेंऐसे समूह अस्तित्व में आए जो धर्मनिरपेक्ष समाजवाद के ध्वजवाहक बने। 1899ई0 में आस्ट्रेलियन लेबर पार्टी (Australian Labor Party) दुनिया की पहली चुनी हुई शासक पार्टी थी जिसने यद्यपि एक ही सप्ताह शासन किया लेकिन उसके द्वारा समाजवाद की जड़ें गहरी और मज़बूत हुईं।

1917ई0 में रूसी क्रान्ति के बाद लेनिन (Lenin) की सरकार बनी, तथा पहली बार समाजवादी व्यवस्था अपनी सम्पूर्ण विशेषताओं के साथ ज़ोरदार अंदाज़ में लागू की गयी, लेकिन केवल चार साल में इस व्यवस्था का वह हाल हुआ कि लेनिन को एक नई आर्थिक नीति लागू करनी पड़ी।

समाजवाद के परिचय तथा बढ़ावे के लिए कम्यूनिस्ट पार्टियों ने रूस की अध्यक्षता में बीसवीं शताब्दी के मध्य में एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का निर्माण किया जो Communist International (Comintern) के नाम से जानी गयी। इस संस्था के कारण लगभग हर देश में एक समाजवादी पार्टी की स्थापना हुई जिसके परिणामस्वरूप इस देश में आज समाजवाद अपनी नाकामी के बाद भी किसी न किसी रूप में मौजूद है।

समाजवाद निम्नलिखित आधारभूत नियमों पर स्थापित है:

1. सामूहिक संपत्ति (Collective Property) अर्थात देश की पैदावार तथा वितरण के समस्त संसाधनों पर जनता का अधिकार होता है, यद्यपि समस्त संसाधनों पर नियन्त्रण तथा विनियमन (Control and Regulation) सरकार के अधिकार में होता है। इस

व्यवस्था में सरकार का उद्देश्य मुनाफ़े के बजाए उद्देश्य की पूर्ति होता है जिसमें भोजन, आवास, वस्त्र, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा रोज़गार जैसी मूलभूत मानवीय आवश्यकताएं शामिल हैं।

2. सामूहिक लाभ (Collective Interest) अर्थात समाजवादी व्यवस्था में योजना के तहत सामूहिक लाभ को बुनियादी तौर पर मद्देनज़र रखा जाताा है। पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में जीवन के विभिन्न स्तर होते हैं, जैसे श्रेष्ठ, औसत तथा निचला वर्ग। पूंजीवादी समाज में पहचान लोगों की आर्थिक हैसियत देखकर तय की जाती है किन्तु एक वास्तविक समाजवादी समाज में जहां तक आर्थिक हैसियत का संबंध है तो सब बराबर हैं और समाज के हर व्यक्ति की योग्यता, प्रवीणता तथा विद्वत्ता को ध्यान में रखते हुए समान अवसर उपलब्ध कराने का प्रण है।

3. योजना (Planning) अर्थात तमाम मूलभूत आर्थिक आवश्यकताओं का विश्लेषण तथा आर्थिक संसाधनों की उपलब्धता के बाद यह निर्णय किया जाता है कि क्या–क्या चीज़ें और कितनी मात्रा में पैदा की जाएं? संसाधनों को किस प्रकार प्रयोग में लाया जाए तथा मेहनत करने वालों का क्या मेहनताना तय किया जाए? इस योजना से आर्थिक उन्नति की संभावना बढ़ जाती है तथा इसके द्वारा समाज में भी उन्नति होती है।

4. न्यायसंगत वितरण (Equitable Distribution) चौथा नियम आमदनी में संतुलन का है यानि पैदावार से जो आमदनी प्राप्त हो वह लोगों के बीच न्यायसंगत तरीक़े से वितरित हो, अमीर तथा ग़रीब के बीच ज़्यादा भेदभाव न हो।

समाजवाद ने शुरू में यह दावा किया था कि आमदनी में बराबरी होगी अर्थात सबकी आमदनी बराबर होगी लेकिन लेकिन इसपर कभी भी क्रियान्वयन नहीं हो सका। लोगों के वेतन तथा मेहनताने कम व ज़्यादा होते रहे। यद्यपि समाजवाद में कम से कम यह दावा ज़रूर किया गया कि इस व्यवस्था में मेहनताने के बीच भेदभाव बहुत अधिक नहीं है।

मूल्य निर्धारण (Rate Fixing) मूल्यों को निर्धारित करने का कार्य स्वतन्त्र रूप से नहीं होता बल्कि केन्द्रीय योजना प्राधिकरण (Central Planning Authority) के अधिकार तथा नियमों के तहत काम करता है। समाजवादी अर्थव्यवस्था में मूल्य को बहुत महत्व प्राप्त है। यदि क़ीमतों को स्वतन्त्र रूप से छोड़ दिया जाए तो मूल्यों पर एकाधिकार होता है जैसा कि मांग व पूर्ति के नियम (Law of Supply and Demand) में होता है कि जब बाज़ार में सामान ज़्यादा होता है तो मूल्य को घटा दिया जाता है और जब सामान में कमी होती है तो मूल्य बढ़ा दिया जाता है।

इस अर्थव्यवस्था में दो प्रकार के मूल्य प्रचलित हैं, एक बाज़ार मूल्य (Market Price) तथा दूसरा हिसाबी मूल्य (Accounting Price)। बाज़ार का मूल्य उपभोक्ता वस्तुओं (Consumer Goods) के लिए होती है तथा हिसाबी मूल्य कम्पनी के मैनेजमेंट के लिए होती हैं। जिससे वह उत्पादन, पूंजी तथा उत्पादन के तरीक़े को आगे बढ़ाने पर विचार करके निर्णय करता है।

समाजवादी व्यवस्था की दो बड़ी ख़राबियां हैं:

1. इस व्यवस्था के तहत मनुष्य योजनाबद्ध जीवन जीने पर मजबूर है। इस योजना में मनुष्य की अपनी आज़ादी पूरी तरह से समाप्त हो जाती है। अब उसका परिणाम यह हुआ कि जहां पूंजीवादी व्यवस्था में एक मनुष्य छोटे पैमाने पर कम्पनी की स्थापना करके कुछ लोगों का शोषण करेगा, समाजवादी व्यवस्था में कुछ लोग पूरे देश पर क़ाबिज़ होकर पूरे देश का शोषण करेंगे।

2. समाजवादी व्यवस्था का दूसरा नुक़सान, निजी लाभ के प्रोत्साहन को पूरी तरह से समाप्त कर दिया जाता है, यानि जो काम करने वाले लोग हैं वह बजाए चुस्ती और मेहनत के सुस्ती और काहिली से काम करेंगे, दोनों स्थितियों में उनको मुआवज़ा तो समान मिलेगा, परिणामस्वरूप बेहतर तरीक़े से काम करने का भाव समाप्त हो जाता है।

जहां पूंजीवादी व्यवस्था ने मनुष्य को पूरी आज़ादी दी थी तो वहीं समाजवादी व्यवस्था ने मानवीय भावना को कुचलकर रख दिया कि उसकी आज़ादी भी ख़त्म हो गयी। इसी प्रकार पूंजीवादी व्यवस्था ने मांग व पूर्ति के नियमों के द्वारा एकाधिकार की तो समाजवादी व्यवस्था ने कुदरती क़ानूनों का इनकार कर दिया और इसकी जगह पर शासन द्वारा निर्मित योजना को हर समस्या का समाधान समझा।

मौलाना अली मियां की फ़िक़्ही दूरदर्शिता

मुहम्मद अरमुग़ान नदवी

"हज़रत मौलाना अली मियाँ नदवी (रह0) वाक़यतन फ़क़ीहे ज़मां थे।"(हज़रत मौलाना क़ाज़ी मुजाहिदुल इस्लाम क़ासमी रह०)

हज़रत मौलाना (रह0) ने 1928ई0 में अल्लामा शिबली फ़क़ीह जयराजपुरी (रह0) से दारुल उलूम नदवतुल उलमा में फ़िक़्ह की बुनियादी तालीम हासिल की, अगरचा उन्हें इस मौज़ू से तबअन दिलचस्पी न थी, लेकिन उन्होंने जिस अंदाज़ से फ़िक़्ह व हदीस का तक़ाबुली मुताला किया था, उसने उनकी शख़्सियत में ग़ैर मामूली तवाज़ुन व एतदाल पैदा कर दिया था, उन्होंने इज्तिहाद व तक़लीद के दरमियान एक ऐसा मुतवाज़िन और मोतदिल मसलक अख़्तियार किया था जो नुक़्ता–ए–एतदाल की मुंह बोलती तस्वीर था, वाक़्या यह है कि बीसवीं सदी में हज़रत मौलाना (रह0) की शख़्सियत, फ़िक्र व लिल्लाही की हक़ीक़ी शारेह व तरजुमान थी, जिन्होंने अपनी कोशिशों से कम से कम बर्रे सग़ीर में हदीस व फ़िक़्ह के दरमियान मुताबिक़त पैदा करने नीज़ लफ़्ज़ियत और अक़्लियत को क़ुरबत देने का कारनामा अंजाम दिया।

हज़रत मौलाना (रह0) हमेशा दीन व मिल्लत की बुनियादी क़दरों और मुसल्लमह उसूलों का लिहाज़ रखते थे, इसीलिए हज़रत मौलाना (रह0) के तरीक़ेकार में फ़िक़्ही मसलक का इख़्तिलाफ़ या मकतबे फ़िक्र का फ़र्क़ कभी दूरी और टकराव का सबब नहीं बना, बल्कि उन्होंने हमेशा मिल्लत की बक़ा के लिए अपनी मुतअयन राय और इन्फ़िरादी मस्लहतों को नज़रअंदाज़ किया, बिलाशुब्हा उनकी तहरीरें और तक़रीरें इस बात की शाहिद हैं कि वह मिल्ली तशख़्ख़ुस और तहफ़्फ़ुज़–ए–शरीअत के मसले में हद दर्जा हस्सास थे। अल्लाह तआला ने उनको जो मुतवाज़िन तर्ज़े फ़िक्र और ग़ैर मामूली फ़हम व फ़रासत अता की थी, उससे उनकी वुसअत–ए–इल्मी और दिक़्क़ते नज़र के साथ फ़िक़्ही बसीरत साफ़ तौर पर नुमाया होती है।

फ़िक़्ह के लिए क़ुरआन मजीद में "तफ़क़्क़ो फ़िद्दीन" का लफ़्ज़ आया है। हज़रत मौलाना (रह0) ने अपनी ज़बान में इस लफ़्ज़ की जो तश्रीह की है, उसको पढ़कर अंदाज़ा होता है कि वह तश्रीह उनकी हयात के ताबन्दा नुक़ूश पर सौ फ़ीसद सादिक़ आती है, मुलाहिजा हो:

"तफ़क़्ह के मानेः दीन में गहरी समझ हासिल करना, दीन के ज़ख़ीरे पर अमीक़ाना नज़र रखना, ज़माने की ज़रूरत को समझना और बदलते हुए ज़माना और दाएमी दीन के दरमियान रिश्ता पैदा कर सकना।" (क़ुरआनी इफ़ादातः 1/205)

हज़रत मौलाना (रह0) फ़िक़्ह व इफ़्ता के मामले में निहायत हस्सास और मोहतात थे, उन्होंने कभी भी फ़िक़्ही मसाएल व जुज़्ईयात पर मुशतमिल ख़ुतूत के जवाब ख़ुद से तहरीर नहीं फ़रमाए, बल्कि उस मौज़ूअ से मुनासबत रखने वालों के सुपुर्द किये, उनका ख़्याल था कि फ़तवा देने में हर मुफ़्ती को बेदार मग़्ज़ी और इन्तिहाई हज़्म व एहतियात के साथ जवाब तहरीर करना चाहिएः

"कुछ लोग अपनी राय के इज़हार में बड़ी उजलत से काम लेते हैं, फिर फ़ौरन ही उससे रुजूअ भी कर लेते हैं, इसमें शक नहीं कि वह अपनी ज़िम्मेदारी पूरी कर रहे हैं, लेकिन फिर उन लोगों को क्या होगा जो उनके फ़तवे की इत्तिबाअ करके और ग़लती पर अमल करके इस दुनिया से चल बसे? और मसला उस वक़्त ज़्यादा संगीन हो जाता है जब उन आरा का ताल्लुक़ दीन और अक़ीदे से हो।" (इज्तिमाई इज्तिहादः 32)

हज़रत मौलाना (रह0) फ़िक़्ह व उसूले फ़िक़्ह की तदवीन को मुसलमानों की बुनियादी ज़रूरत तसव्वुर करते थे। उन्होंने एक मौक़े पर सराहतन फ़रमायाः

"अरब और अजम के इख़्तिलात और इस्लाम पर अमल करने वालों के लिए तमाम अरबी उलूम की तदवीन की निस्बत फ़िक़्ह की तदवीन ज़्यादा ज़रूरी थी। क्योंकि फ़िक़्ह हर मुसलमान की ज़िन्दगी का अहाता करती है, इबादत और अक़ीदे से उसका मज़बूत रिश्ता है, उख़रवी ज़िन्दगी और उस पर मुरत्तब होने वाले सवाब व अज़ाब, सआदत और बदबख़्ती नीज़ बख़्शिश और हलाकत पर फ़िक़्ह के गहरे असरात मुरत्तब होते हैं। (इज्तिहाद और फ़िक़्ही मज़ाहिबः 13)

हज़रत मौलाना (रह0) ने फ़िक़्ह और उसूले फ़िक़्ह की तदवीन के कारनामे को हर मौक़े पर सराहा और उसके लिए बुलन्द कलिमात इरशाद फ़रमाए, ताहम वह इल्मी व फ़िक़्ही महफ़िलों में यह बात भी बड़ी ताक़त से उठाते थे कि मौजूदा दौर के तक़ाज़ों को पेश नज़र रखकर फ़िक़्ह जदीद की तदवीन एक नागुज़ीर अम्र है, शरई उलूम के माहिरीन को इस मैदान में असासी किरदार अदा करना चाहिए और उसूले फ़िक़्ह के क़ीमती सरमाए से एहकाम व मसाएल इस्तम्बात करके पूरी इन्सानियत के सामने पेश

करना चाहिए, जिसका फ़ायदा न सिर्फ़ यह होगा कि उम्मते मुस्लिमा के तमाम मामलात शरीअत के मुताबिक़ होंगे, बल्कि वहीं दुनियाए इन्सानियत भी इस्लाम की हक़्क़ानियत और उसी आफ़ाक़ियत के सामने सरे तस्लीम ख़म कर देगी, वह फ़रमाते थेः

"यक़ीनन तहज़ीब' सिनअत और तिजारत इस हद तक तरक़्क़ी कर चुकी हैं कि अंदाज़ा करना मुश्किल है, नए उस्लूब पैदा हो चुके हैं, मुआहदात और तिजारती उमूर ऐसे फ़िक़्ही हुक्म का मुतालबा कर रहे हैं, जिनकी बुनियाद इस्लामी शरीअत की रोशनी में इस्लामी उसूलों और उसूले फ़िक़ह पर क़ायम हो।" (इज्तिहाद और फ़िक़्ही मज़ाहिबः 20)

हज़रत मौलाना (रह0) की जामेअ व मुतवाज़िन फ़िक्र का ख़ास्सा था कि वह इस तजदीदी व तहक़ीक़ी और इज्तिहादी काम के पुरज़ोर दायी ज़रूर थे, ताहम वह हमेशा इज्माए उम्मत के ख़िलाफ़ न जाने की ताकीद भी करते थे, इसीलिए उनका कहना था कि ऐसे अज़ीम इल्मी कारनामे के लिए इन्फ़रादी इज्तिहाद से बेहतर है कि यह काम जमाअती और इदारों की सतह पर हो, वह कहते हैंः

"बेहतर तो यह है कि इन्फ़िरादी तौर पर इज्तिहाद के बजाए इज्माई तौर पर इज्तिहाद किया जाए, वह इस तरह कि शरीअत के माहिरीन की एक एकेडमी हो, जिसमें किसी मसले पर तवील ग़ौर व फ़िक्र, बहस व मुबाहिसा और राय का तबादला और क़ुरआन व सुन्नत और फ़िक़ह व उसूले फ़िक़ह के पूरे ज़ख़ीरे के भरपूर जाएज़े के बाद फ़ैसला किया जाए, ताकि इसमें किसी साज़िश या किसी सियासी कूव्वत या इस्तबदादी हुकूमत का अक्स न पड़ने पाए" (इज्तिमाई इज्तिहादः 21–22)

1963ई0 में इन्हीं बुलन्द मक़ासिद की तकमील के लिए हज़रत मौलाना (रह0) ने नदवतुल उलमा में ''मजलिसे तहक़ीक़ाते शरीअह'' क़ायम की जिसमें बर्रे सग़ीर के मायानाज़ उल्मा व फ़ुज़्ला और माहिरीन फ़िक़ह व इफ़्ता की एक जमाअत को यकजा किया गया, ताकि वह बाहिमी ग़ौर व फ़िक्र के बाद जदीद मसाएल के मुफ़ीद नताएज बरामद करे और फ़िक़ह की तदवीने जदीद का फ़रीज़ा बहुस्ने खूबी अंजाम दे, इस सिलसिले में हज़रत मौलाना (रह0) का यह तारीख़ी जुम्ला मुलाहिज़ा होः

"यह फ़िक़ह की तदवीने जदीद का अहम काम है जिसको बिला ताख़ीर होना चाहिए।" (तामीरे हयात, 1/10, शुमाराः 2/25–नवम्बर 1963ई0)

अल्हम्दुलिल्लाह इस मजलिस ने असहाबे नज़र व अरबाबे फ़तवा के मशविरे से बहस व तहक़ीक़ का बाकायदा एक मनहज तय किया और कई जदीद मसाएल को मौज़ूए बहस बनाया और उन मसाएल का इन्तिहाई मोतदिल व मुतवाज़िन हल पेश किया, मसलनः इन्श्योरेंस का मसला, जदीद आलात की मदद से रूयते हिलाल का मसला, नसबन्दी का मसला और सरकारी क़र्ज़ों का मसला। (मुलाहज़ा होः अब्नाए नदवा की फ़िक़्ही ख़िदमातः 171–179)

इसमें शुब्हा नहीं कि दौरे जदीद के तक़ाज़ों के पेशनज़र हज़रत मौलाना (रह0) फ़िक़्ह और उसूले फ़िक़ह की हुदूद में रहते हुए इज्तिहाद के पुरज़ोर दाई थे, वह ख़ुद अपने वुसअते मुताला और ज़हनरसा की बुनियाद पर फ़ुरूआत में तौसीअ से काम लेते थे, लेकिन यह भी सच है कि वह अइम्माए मुजतहिदीन की तक़लीद के क़ायल और दाई थे, एक मौक़े पर आपने फ़रमायाः

"अगर हम मुज्तहिदीन में से किसी एक की तक़लीद करते हैं तो यह उस यक़ीन के साथ है कि हमें मालूम है कि ऐसा शख़्स अल्लाह तआला की किताब और उसके रसूल (स0अ0व0) की सुन्नत का आलिम है, उसका क़ौल या तो किताब व सुन्नत की सरीह नस से साबित होगा या उनके मुरवज्जा तरीक़े से इस्तम्बात किया गया होगा, या क़राएन से जाना गया होगा कि हमारी मतलूबा मुश्किल का हल इस तरह से है और यह भी नबी करीम (स0अ0व0) की तरफ़ मन्सूब होगा, अगर ऐसा न होता तो मुसलमान किसी मुजतहिद की तक़लीद क्यों करते?" (इज्तिहाद और फ़िक़्ही मज़ाहिबः 18)

हज़रत मौलाना (रह0) ही हिन्दुस्तान की तन्हा वह अबक़री शख़्सियत हैं जो 1962ई0 में राबता–ए–आलम–ए–इस्लामी मक्का मुअज़्ज़मा की ''फ़िक़ह एकेडमी'' के मेम्बर बने और 1982ई0 में हिन्दुस्तानी मुसलमानों के मुत्तफ़िक़ा प्लेटफ़ार्म आल इण्डिया मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड के सदर मुन्तख़ब हुए। इसी तरह 1989 से आख़िर वक़्त तक आल इण्डिया फ़िक़ एकेडमी की सरपरस्ती भी फ़रमाई, जिसमें फ़िक़ के मौज़ूअ पर आपने मुतअद्दिद कलीदी खुत्बात पेश किए।

हज़रत मौलाना (रह0) का जज़्बाए एहतिसाब उन अज़ीम मुनासिब को हमेशा वक़ार बख़्शता रहा, लिहाज़ा उनके सामने जब भी तहफ़्फ़ुज़–ए–शरीअत का कोई ऐसा मामला पेश आ जाता जो क़ौमों के दरमियान उनकी इम्तियाज़ी हैसियत को बावक़ार कराता हो, तो वह ऐसे मौक़े पर अपनी वुसअते ज़र्फ़ी के बावजूद तसल्लुब से काम लेते और एक इंच भी अपने मौक़िफ़ से पीछे हटना गवारा न फ़रमाते।

1984ई0 में जब ''मुस्लिम ख़्वातीन मुतअल्लक़ा बिल'' का मसला खड़ा हुआ तो हज़रत मौलाना (रह0) ने पूरे अज़्म व हौसले के साथ क़ानूनी दायरे में रहते हुए अपनी बात कही और इस सिलसिले में उन्होंने किसी इस्लामी मुल्क या किसी दूसरे फ़िक़्ही मसलक की राय पर रज़ामंदी गवारा न की, बल्कि वह मुसिर रहे कि यह बिल फ़िक़्ह हनफ़ी के मुताबिक़ ही पास किया जाएगा, जिस वक़्त बिल पास होने की कशमकश जारी थी, तब हज़रत मौलाना (रह0) को इल्म हुआ कि राजीव गांधी बाज़ उन इस्लामी मुमालिक के बारे में पता लगा रहे हैं जहां यह बिल फ़िक़्ह हनफ़ी के मुताबिक़ नहीं है, ऐसे नाज़ुक व पुरपेंच मौक़े पर हज़रत मौलाना ने राजीव गांधी के सामने जो तारीख़ साज़ अल्फ़ाज़ कहे वह भी उनकी फ़िक़्ही बसीरत का शाहकार हैं, अल्फ़ाज़ नज़रे क़ारईन हैं:

"आलमे इस्लामी की सबसे बड़ी माहिरीने क़ानून शरीअते इस्लामी की एकेडमी का हिन्दुस्तान में मैं तन्हा मेम्बर हूं, बाज़ मर्तबा ऐसा हुआ कि सारे मेम्बरान एक तरफ़ थे, मैं एक तरफ़ था और फ़ैसला मेरी राय पर हुआ, यहां इसी मजलिस में ऐसे उलमा मौजूद हैं कि अगर उनका नाम जामेअ अज़हर मिस्र में लिया जाए तो लोग एहतराम से गर्दन झुका लेंगे।" (कारवाने ज़िन्दगी: 3/134)

हज़रत मौलाना (रह0) के यह चन्द मुअस्सिर जुमले राजीव गांधी के दिल पर नक़्श हो गए और आख़िरकार वह बिल फ़िक़्ह हनफ़ी के मुताबिक़ ही पास हुआ।

हज़रत मौलाना (रह0) ने अपनी तहरीरों में जहां जगह–जगह पर इसरारे शरीअत व उसकी हिकमतें व मस्लहतें बयान की हैं, वहीं बाज़ मक़ामात पर बहुत से ऐसे फ़िक़्ही नुकात भी बयान किये हैं जिनसे उनकी फ़िक़्ही बसीरत और वुसअते ज़हनी का अंदाज़ा होता है, ज़ेल में चन्द नमूने मुलाहिज़ हों।

अक्सर मुतक़द्दिमीने फ़ुक़्हा ताद्दुदे जुमा के क़ायल न थे, ताहम मुताख़्ख़िरीने फ़ुक़्हा ने इस मसले पर तौसीअ अख़्तियार किया है, हज़रत मौलाना (रह0) ने दोनों फ़रीक़ के मौक़िफ़ की इन्तिहाई जामेअ अंदाज़ में हिकमतें बयान की हैं, मगर जदीद तक़ाज़ों के मद्देनज़र अपनी राय बलीग़ उस्लूब में बयान की है:

"अगर जुमा और उसके मुक़द्दमात व इन्तिज़ामात व इज्तिमाआत होते तो मुसलमानों की एक बड़ी तादाद उस जाहिल मुआशरे में जज़्ब हो जाती और इरतिदाद की मौजें जो इसके माहौल से टकरा रही हैं, उसको निगल लेती और कुछ दिन बाद यह पता चलाना भी दुश्वार हो जाता कि उसका इस्लाम से कुछ ताल्लुक़ भी रह चुका है, यही वह मसालेह थे जिनके पेश नज़र अहदे आख़िर के बाज़ उल्माए अहनाफ़ ने इसमें सख़्ती व तंगी रवा न रखी, बल्कि तौसीअ अख़्तियार किया है।" (अरकाने अरबा: 88)

ज़कात के मसारिफ़ में ''मुअल्लिफ़तुल क़ुलूब'' भी एक मसरफ़ है यानि दिलजोई के लिए उन लोगों को ज़कात दी जाए जो इस्लाम से उन्स रखते है और क़रीब आना चाहते हैं, ख़ुल्फ़ाए राशिदीन के अहद में भी ग़ल्बाए इस्लाम के बाद इस मसरफ़ पर अमल ख़त्म हो गया और बाद के ज़मानों में भी इस पर किसी ने एअतना नहीं किया, मगर हज़रत मौलाना (रह0) ने मसारिफ़े ज़कात का ज़िक्र करते हुए क़ाज़ी अबूबक्र बिन अलअरबी (रह0) के हवाले से अपनी जामेअ व मुतवाज़िन राय का इज़हार इन अल्फ़ाज़ में किया है:

"मेरी राय यह है कि अगर इस्लाम को ग़ल्बा और इक़्तिदार हासिल हो तो ज़रूरत नहीं, लेकिन अगर इसकी ज़रूरत महसूस की जाए तो उनको इसी तरह देना चाहिए जिस तरह रसूलुल्लाह (स0अ0व0) देते थे।" (अरकाने अरबा: 164)

टेक्नालॉजी के जदीद दौर में रुयते हिलाल का मसला अर्से से ज़ेरे बहस है। बाज़ अफ़राद जहाज़ या रॉकेट वग़ैरह से आसमान की बुलन्दी पर पहुंचकर रुयते हिलाल के जवाज़ के क़ायल हैं और बाज़ नहीं, इस सिलसिले में हज़रत मौलाना (रह0) ने इन्तिहाई मुख़्तसर अल्फ़ाज़म में दो टूक बात कही है:

"शरीअत में एतबार ज़हूरे हिलाल का है, वजूदे हिलाल का नहीं, इसलिए इसकी रुयत के असबाब के लिए रियाज़ी और मस्नूई तकल्लुफ़ात का सहारा लेने की मुतलक़ ज़रूरत नहीं।'' (अरकाने अरबा: 282)

हज़रत मौलाना (रह0) के नज़दीक फ़िक़्ही नुक्ताए नज़र से मिल्ली इस्तहकाम के लिए ख़िलाफ़त और इमारत का निज़ाम भी ज़रूरी था, ख़ुद उन्होंने इसकी ख़ातिर अमली कोशिशें की मगर वह ख़्वाब शर्मिंदाए ताबीर न हो सका, ताहम उनका कहना यही था:

"मुसलमान ख़िलाफ़त व इमारत का निज़ाम क़ायम करने के शरई तौर पर मुकल्लफ़ हैं और इसमें कोताही व सहल अंगारी उनको गुनाहगार कर सकती है, हदीस व फ़िक़्ह की किताबों और इस्लाम की रूह और उसके मक़ासिद की सही फ़हम का भी यही तक़ाज़ा है।" (अरकाने अरबा: 194)

तुम न बदलोगे तो हालात भी न बदलेंगे

मुहम्मद नफ़ीस ख़ाँ नदवी

हिन्द की आज़ादी के बाद से मुल्क के मुख़्तलिफ़ इलाक़ों में संगीन फ़सादात हुए, सख़्त जानी व माली नुक़सानात हुए, गुजरात फ़साद ने तो हैवानियत की सारी हदें ही पार कर दीं। दलीलें व सुबूत गवाह हैं कि यह सारे फ़साद निहायत मुनज़्ज़म और सरकारी पुश्तपनाही में ही हुए, जो यक़ीनन हिन्दुस्तान के माथे पर बदनुमा दाग़ हैं ताहम यह फ़साद वक़्ती थे और मुल्क के ख़ास–ख़ास इलाक़ों में वाक़ेअ हुए थे, इसलिए जल्द ही मुस्लिम क़ौम इन सदमों से बाहर निकल आयी, लेकिन मौजूदा सूरतेहाल पहले के मुक़ाबले ज़्यादा संगीन और तश्वीशनाक है, इस वक़्त फ़िरक़ावारियत, तश्द्दुद पसंदी और नफ़रत की सियासत को मज़हब के नाम पर न सिर्फ़ बढ़ावा दिया जा रहा है बल्कि लोगों के मिज़ाजों में भी दाख़िल किया जा रहा है, जिसके लिए जारिहियत पसंद तन्ज़ीमें पूरी आज़ादी के साथ सरगर्मे अमल हैं। ऐसे में मुल्क का कोई ख़ित्ता और कोई तबक़ा महफ़ूज़ नहीं है। अक़्लियतें परेशान और मुस्लिम क़ौम सख़्त मरूबियत और तश्वीश में पड़ी हुई है, और अपने मुस्तक़बिल को लेकर बेचैनी का शिकार है। बिलाशुब्हा इस कैफ़ियत का पैदा होना तबई और फ़ितरी है लेकिन किसी भी सूरत में मायूस होना और ठोस लाहयाए अमल से ग़फ़लत बरतना ईमान के शायाने शान नहीं।

हालात का तर्जुबा बतलाता है कि इस तश्वीशनाक सूरतेहाल के मुख़्तलिफ़ असबाब में से एक बुनियादी ग़लती ख़ुद मुसलमानों की है, मुसलमानों ने अपनी इफ़ादियत और नाफ़ेईयत को न सिर्फ़ ख़त्म कर दिया बल्कि वह यहां की मुश्रिक व बुत परस्त क़ौमों में पूरी तरह घुल–मिल गए और अपने मिल्ली तशख़्ख़ुस और मज़हबी इम्तियाज़ात को ही फ़रामोश कर दिया, मुस्लिम और ग़ैर मुस्लिम में ज़ाहिरी तौर पर कोई फ़र्क़ बाक़ी न बचा। ज़िन्दगी के सारे शोबों में इस्लाम की रूह ख़त्म होती चली गयी जिसका नतीजा यह निकला कि ईमान वालों व मुश्रिकों के बीच अख़लाक़ी व मुआशरती सारे इम्तियाज़ात ख़त्म हो गए, आख़िरकार मुसलमान इस क़दर पस्त और कमज़ोर हुए कि उनकी हैसियत सियासी मोहरों से ज़्यादा न बची, जिन्हें सियासी जमाअतों ने अपने–अपने मफ़ादात में भरपूर इस्तेमाल किया।

मुस्लिम दानिशवर व मुफ़क्किरीन ने इस ज़वाल से निकलने के लिए बहुत से लाहयाए अमल पेश किये, किसी ने कहा कि मुसलमान की तालीमी बेदारी के बग़ैर उरूज मुमकिन नहीं है, किसी ने इक़्तिसादी ताक़त पर ख़ास तवज्जो दी और किसकी ने सियासी इत्तेहाद को मुसलमानों के उरूज की बुनियाद क़रार दिया। तजज़िया निगारों ने भी इसका एतराफ़ किया है कि तालीम से आग़ाज़ करने वाली मिल्लत आज नाख़्वान्दग के संगीन मसाएल से दो–चार है। तालीमी बेदारी एक बुनियादी ज़रूरत है और उन्हें इस मैदान में सबक़त करनी चाहिए, मेयारी इदारों का क़याम और बदलते हुए हालात से हम आहंग निज़ाम व निसाब वक़्त की एक अहम ज़रूरत है। इक़्तिसादियात व माशियात में भी उन्हीं ग़ैरों की ग़ुलामी का तौक़ गले से उतार कर ख़ुद मुख़्तार बनना होगा, उनका अपना कारोबार हो, फ़ैक्ट्रियां हों, सिनअतें हों, हाथ फैलाने के बजाए दूसरों को देने की पोज़ीशन में हों। इसी तरह हर मुल्क की सियासत में मुसलमानों की ख़ातिरख़्वाह नुमाइन्दगी भी होनी चाहिए और जहां हालात मुतक़ाज़ी हों वहां उनकी अपनी मज़बूत सियासी पार्टी भी हो क्योंकि इल्मी और फ़न्नी कारनामें उन्हीं इलाक़ों में वाक़ेअ होते हैं जहां मआशी ख़ुशहाली और सियासी इस्तिहकाम हो, भूखे शख़्स को इल्म व फ़न की आबयारी करने से ज़्यादा पेट को भरने की फ़िक्र होती है।

लेकिन इस एतराफ़ के साथ तर्जुबा निगारों का

दावा और मुसलमानों के उरूज व ज़वाल की तारीख़ भी गवाह है कि यह सारी चीज़ें वसाएल की हैं, हक़ीक़ी मामला में ईमान व यक़ीन का और सही इस्लामी शऊर का है। आलात की कसरत, वसाएल की फ़रावानी और दौलत की बहुतात से मुसलमान कभी उरूज की मंज़िले तय नहीं कर सकते। वह अपने दुश्मन का मुक़ाबला सिर्फ़ ईमान व यक़ीन, सही इस्लामी शऊर और इस स्प्रिट के साथ कर सकते हैं जिस स्प्रिट के साथ कभी उन्होंने एक ही वक़्त में रूमी व ईरानी हुकूमत को चैलेंज किया था और फ़तेह हासिल की थी।

बिलाशुब्हा इस्लाम आफ़ताब की तरह न कभी पुराना था और न कभी पुराना है। रसूलुल्लाह (स0अ0व0) की नुबूव्वत दायमी है और रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का दीन ज़िन्दा व पाइन्दा और आपकी तालीमात सदाबहार हैं। आज मुस्लिम क़ौम को किसी नए पैग़म्बर, नई शरीअत और नई तालीम की क़तअन ज़रूरत नहीं लेकिन उसे नए ईमान, नए यक़ीन और नए अज़्म व हौसले की ज़रूरत बहरहाल है।

मुस्तक़बिल क़रीब में इस्लामियत व ग़ैर इस्लामियत की जंग ज़मीनी होगी। इस जंग की कामयाबी व नाकामी पर ही आने वाले मारकों के नताएज का इन्हिसार होगा।

ख़ुशआइन्द बात यह भी है कि मुल्क की अक्सरियत अब भी सेक्यूलर बुनियादों पर यक़ीन रखती है। वह मुल्क की सालिमियत और उसकी गंगा–जमुनी तहज़ीब की बक़ा के लिए फ़िक्रमंद भी है। ऐसे हालात में मुसलमानों की बुनियादी ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी इफ़ादियत को साबित करें, इस्लाम की हक़्क़ानियत और आला तालीमात से ग़ैरों को मुतआरिफ़ कराएं। आपसी मेल–जोल, तिजारत व मामलात, सफ़र व हजर मुख़्तलिफ़ तक़रीबात व हादसात बल्कि ज़िन्दगी के हर शोबे में ऐसा अमली नमूना पेश करें की नफ़रत की दीवारें ख़ुद ब ख़ुद ढह जाएं और मज़हब के नाम पर जो ख़लीज क़ायम की जा रही है वह ख़त्म हो जाए और उसके लिए किसी भी तहरीक, जमाअत या तंज़ीम से वाबस्तगी की कोई शर्त नहीं। हर एक अपनी–अपनी सतह पर उसका आग़ाज़ करे। वह ख़ुद को एक नफ़ाबख़्श और फ़ायदेमंद मुसलमान साबित करे, फिर वह ख़ुद भी उसके बेहतरीन नताएज का मुशाहिदा करेगा। यही तरीक़ा है इस मुल्क में मुसलमानों के मिल्ली तशख़्ख़ुस और मज़हबी इम्तियाज़ात के साथ बाक़ी रहने का। इसके अलावा अगर कोई ऐसा तरीक़ा अख़्तियार किया गया जिसकी बुनियाद जज़्बातियत पर या सियासी दांव पर होगी तो शायद हालात की तब्दीली मज़ीद क़ुर्बानियों की मांग करे।

मुस्तक़बिल यक़ीनन इस्लाम का है और आज हम एक मुनफ़रिद इन्क़िलाब आफ़रीं और ग़ैर मामूली तारीख़ी लम्हे की दहलीज़ पर खड़े हैं और तक़दीर के इस फ़ैसले ने उम्मते मुस्लिमा को एक अज़ीम इम्तिहान से दो–चार कर दिया है। मुस्तक़बिल की आलमी क़यादत मन्न व सलवा की तरह हमारी गोद में नहीं उतरेगी बल्कि हमें ईमान व यक़ीन, अज़्म व हौसला, हिकमत व तदबीर और किरदार व अमल के ज़रिये इसको हासिल करना होगा और इस जद्दोजहद का सरचश्मा ऐतिसाम बिल्लाह के सिवा कुछ नहीं।

आलमी ऐदाद व शुमार बताते हैं कि आज दुनिया में हर पांचवा शख़्स मुसलमान है। तमाम हस्सास बर्री व बहरी रास्ते मुस्लिम इलाक़ो से गुज़रते हैं, हम बेहतरीन इन्सानी व माद्दी ज़ख़ीरे के मालिक हैं, हमारी ज़मीनें सोना उगलती हैं और हर क़िस्म की मादनियात से हम मालामाल हैं, अल्लाह तआला ने हमें बेहतरीन दिल व दिमाग़ व सलाहियतें बख़्शी हैं, अगर कोई कमी है तो सिर्फ़ ईमानी क़ूव्वत की और ईमानी शऊर की और यही ताक़त हमेशा से मुसलमानों की क़ूव्वत व ग़लबा और मोजज़ात व आयात का मजमूआ रही है। इसके बग़ैर न तालीमी मिशन कामयाब हो सकता है, न सियासी तहरीक़े मुफीद साबित हो सकती हैं और न इक़्तिसादी व मआशी हालात में सुधार आ सकता है। मुसलमानों के सिलसिले में यही अल्लाह का तरीक़ा है, चौदह सदियों का यही तर्जुबा है और तारीख़ का यही फ़ैसला भी जिससे न इनकार किया जा सकता है और न जिसमें बहस व मुबाहिसे की गुंजाइश है।

ख़ुदा ने आज तक उस क़ौम की हालत नहीं बदली ।
न हो जिसको ख़्याल आप अपनी हालत के बदलने का।।

रमज़ानुल मुबारक की अहम दुआएं

जब चांद देखें तो ये दुआ पढ़ें:

"اَللهُم اهِلهُ عَلَيْنَا بِالْاَمْنِ وَالْإِيْمَانِ وَالسلاَمَةِ وَالْإِسْلاَمِ

رَبِّي وَرَبكَ اللّٰهُ هِلاَلَ رُشْدٍ وخَيْرٍ"

इफ़्तार से पहले ये दुआ पढ़ें:

"يَا وَاسِعَ الْفَضْلِ اِغْفِرْلِیْ"

इफ़्तार के वक़्त ये दुआ पढ़ें:

"اَللهُم لَكَ صُمْتُ وَعَلىٰ رِزْقِكَ اَفْطَرْتُ "

इफ़्तार के बाद ये दुआ पढ़ें:

"ذَهَبَ الظمَا وَابْتَلتِ الْعُرُوْقُ وَثَبَتَ الْاجْرُ إِنْ شَاءَ اللّٰهُ"

किसी के यहां इफ़्तार करें तो ये दुआ पढ़ें:

"اَفْطَرَ عِنْدَكُمُ الصائِمُوْنَ وَاَكَلَ طَعَامَكُمُ الْاَبْرَارُ

وَصَلتْ عَلَيْكُمُ الْمَلاَئِكَةُ"

तरावीह में हर चार रकआत के बाद ये दुआ पढ़ें:

سُبْحَانَ ذِی الْمُلْكِ وَالْمَلَكُوْتِ،

سُبْحَانَ ذِی الْعِزةِ وَالْعَظَمَةِ وَالْقُدْرَةِ وَالْكِبْرِيَاءِ وَالْجَبْرُوْتِ،

سُبْحَانَ الْحَيِّ الْمَلِكِ الذِيْ لَايَمُوْتُ، سُبوْحٌ قُدوْسٌ رَب الْمَلاَئِكَةِ وَالروْحِ،

لَاإِلٰهَ إِلا اللّٰهُ، نَسْتَغْفِرُ اللّٰهَ، نَسْأَلُكَ الْجَنةَ وَنَعُوْذُبِكَ مِنَ النارِ۔

"اَللهُم اِنكَ عَفو تُحِب الْعَفْوَ فَاعْفُ عَنِّيْ. "

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 04-05 | April - May 2022 | Volume: 14

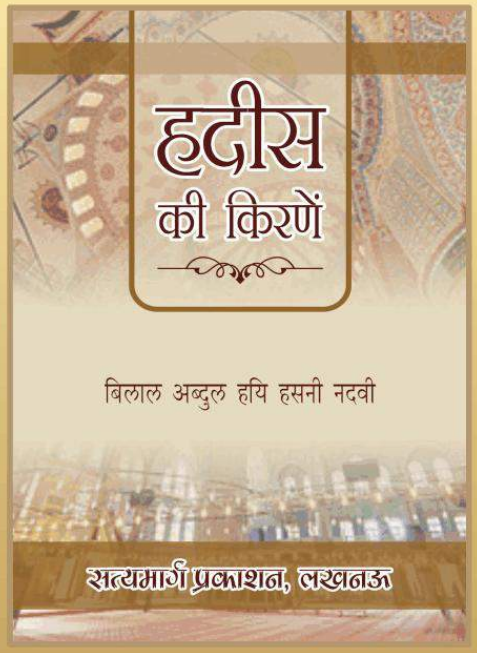

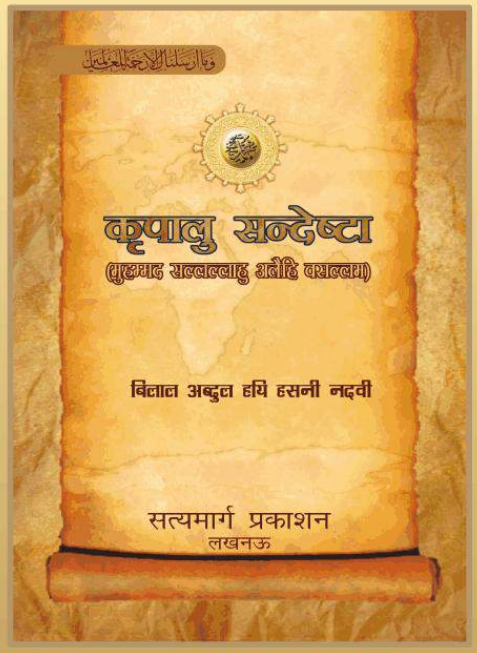

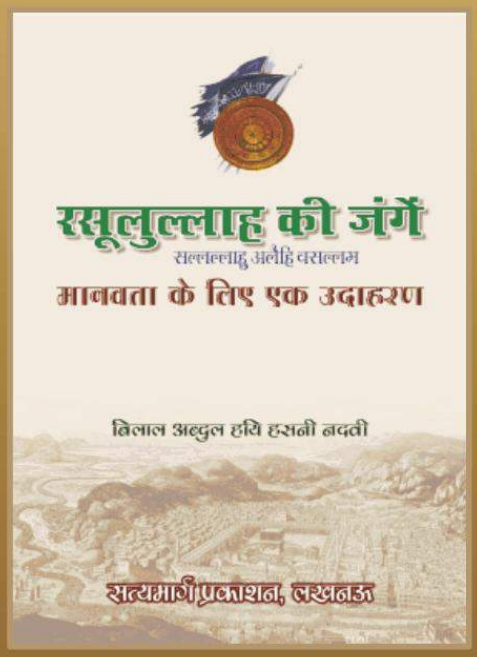

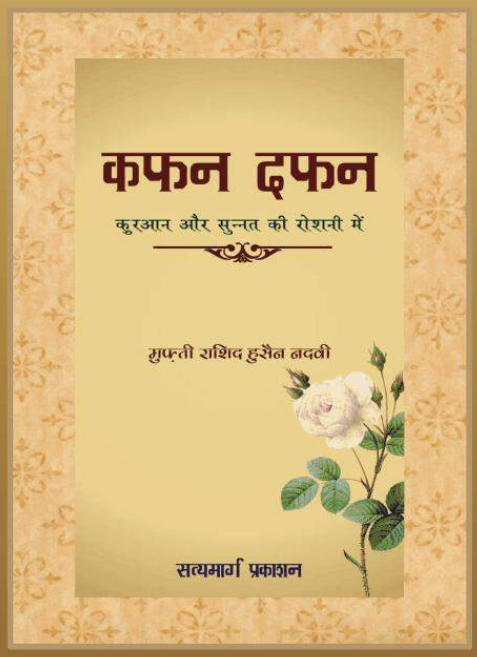

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.